9.2

ारिक पृष्ठभूमि

काशी के ठीक सामने दूसरी ओर बसा नवास करते थे और श्री लालबहादुर द काशी नरेश के दीवान थे। श्रीवा- वह परिवार था। श्री बृजमोहन प्रसाद जी के दो पुत्र थे—श्री जगेश्वर प्रसाद वर्मा और श्री कौलेश्वर प्रसाद वर्मा।

श्री जगेश्वर बड़े थे, इनके तीन पुत्र हुए; श्री नन्दनलाल, श्री शिवनन्दनलाल तथा श्री रघुनन्दनलाल। छोटे भाई श्री कौलेश्वर प्रसाद के एक पुत्र श्री मथुरा प्रसाद थे और एक पुत्री थी। रामनगर में रहती थीं। परबाबा का मकान रामनगर में आज भी टूटी-फूटी अवस्था में पड़ा हुआ है।

श्री नन्दलाल जी के पुत्रों में से श्री शारदा प्रसाद जी सबसे बड़े पुत्र थे।

श्री शारदा प्रसाद जी की आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं थी। अत-एव वे एक साधारण परिवार के एक सरल व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे। वे इलाहाबाद की कायस्थ पाठशाला के एक छोटे से प्राई- वच्च ा अंग्रेजी स्कूल के अध्यापक थे। आज भी वह स्कूल एक की भीलिज के रूप में है।

भाभियमुगलसराय रेलवे स्कूल में मुंशी हजारीलाल जी (शास्त्री

जी के नाना) प्राइमरी स्कूल के मुख्य अध्यापक थे।

उस समय मुगलसराय जैसे छोटे से स्थान में इस स्कूल का बड़ा महत्व था और उस स्कूल में दो-चार वर्ष पढ़ लेने वाला बालक रेलवे में बड़ी आसानी से नौकरी प्राप्त कर लेता था। यदि कहा जाए कि उस समय का यह अंग्रेजी स्कूल रेलवे का एक भर्ती-केन्द्र था, तो अनुचित न होगा और इसी कारण बनारस से ७-मील दूर इस मुगलसराय रेलवे स्कूल का बड़ा नाम था।

मुख्य अध्यापक मुंशी हजारीलाल जी अपने वर्ग के ही अध्यापक श्री शारदा प्रसाद जी से बड़े प्रभावित हुए और जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि वे भी श्रीवास्तव कायस्थ हैं तो उन्होंने अपनी बड़ी पुत्री रामदुलारी का विवाह उनसे करने का निश्चय कर लिया।

और कुछ ही दिनों बाद मुंशी हजारीलाल जी ने अपनी कन्या रामदुलारी देवी का शुभ-विवाह श्री नन्दलाल जी के पुत्र श्री शारदा प्रसाद जी से कर दिया।

मुंशी शारदा प्रसाद जी प्रारम्भिक काल में कायस्थ पाठशाला में ही एक अध्यापक थे। बाद में सरकारी बन्दोबस्त विभाग में नायब तहसीलदार बने और इलाहाबाद में ही रहने लगे।

मुंशी शारदा प्रसाद जी का घरेलू जीवन बड़ा सादा व सरल था। इनकी पत्नी श्रीमती रामदुलारी देवी एक चरित्रवान व निष्ठावान स्त्री थीं।

रामदुलारी जी अपने परिवार में तथा ससुराल में भी सबसे बड़ी पुत्री, बहन और इधर बड़ी पतोहू और भाभी रहीं। एक अध्यापक की बड़ी कन्या होने के कारण इन्हें पिता ने उस जमाने में भ[illegible] उर्दू, बंगला तथा अंग्रेजी की शिक्षा दे रखी थी। मुगलसरा[illegible] बंगाली पड़ौसी के सम्पर्क में आकर वे बंगला पढ़ना व बो[illegible]

सीख गई थीं। रामदुलारी देवी—सिलाई, कढ़ाई और सभी घरेलू काम-काज में वड़ी कुशल थीं। सदा से वे वड़ी परिश्रमी तथा सेवा-कार्य में दक्ष थीं। वह रिस्तेदारों तथा पड़ोसियों के यहां तक जरूरत पड़ने पर दौड़ पड़ती थीं और ऐसे मुसीबत के अवसरों पर सेवा करना वे अपना वड़ा सौभाग्य समझती थीं। इसीलिए उन्होंने छोटी आयु में ही दोनों परिवारों में सभी के दिलों में श्रद्धा का स्थान वना लिया था।

ननिहाल

श्री शास्त्री जी की ननिहाल एक शिक्षित कायस्थ संयुक्त परिवार था, जो आज भी उसी प्रकार है। मिर्जापुर के वे लोग निवासी हैं जो रोजी के लिए मुगलसराय में आकर रहने लगे थे। नाना मुंशी हजारीलाल जी का मध्यम श्रेणी का चार छोटे-वड़े भाइयों का एक संयुक्त परिवार था। मुंशी हजारीलाल जी तथा उनके सवसे छोटे भाई मुंशी दरवारीलाल जी अपनी-अपनी वड़ी कन्या रामदुलारी देवी तथा श्यामादेवी के विवाह से छुट्टी पा लेने के पहले ही से पारिवारिक आपत्तियों में पड़ चुके थे।

मुंशी हजारीलाल जी के दो वड़े भाई युवा-अवस्था में ही स्वर्ग सिधार चुके थे और सन्तप्त दो युवा विधवाओं तथा एक नवजात शिशु लक्ष्मी नारायन को अपने पीछे छोड़ गए थे। इतना ही नहीं, छोटे भाई मुंशी दरवारीलाल जी की धर्मपत्नी एक कन्या श्यामादेवी तथा एक पुत्र विन्देश्वरी प्रसाद को छोड़कर स्वर्गवासी हो चुकी थीं। ये वच्चे छः तथा तीन वर्ष के एक शिशु भी थे। मुंशी दरवारीलाल जी की भी उम्र उस समय केवल ३२ वर्ष की ही थी, फिर भी दो विधवा भाभियों के घर में होने के कारण इन्होंने दूसरा विवाह करना स्वी-

कार नहीं किया और दोनों भाई संयुक्त परिवार का संचालन करते रहे।

मामा बिन्देश्वरी प्रसाद जी कुश्तीबाज थे। डीलडौल के अच्छे थे। दूध, घी तथा मांस खाने का उन्हें बड़ा शौक था। वे लगभग नित्य ही मांस खाने के आदी थे और इसके लिए उन्होंने बहुत से कबूतर भी पाल रखे थे। हजारीलाल जी भी मांस के शौकीन थे। पर बाद में उन्होंने सारे व्यसन छोड़ दिए।

शास्त्री जी की हट के कारण ननिहाल में मांस का सेवन बन्द हो गया था और १५ वर्ष तक घर में कभी मांस नहीं आया और समस्त परिवार पूर्ण शाकाहारी बन गया।

शिक्षित परन्तु अत्यन्त साधारण एवं अनेक छोटे-बड़े लोगों से भरा यह संयुक्त परिवार था। मुंशी हजारीलाल जी का जीवनकाल मुगलसराय के प्राईमरी अध्यापक के रूप में बीता था अतएव मुगलसराय इनका बहुत अर्से तक पक्का निवास बना रहा; वैसे ये मिर्जापुर के स्थायी निवासी थे।

यह परिवार 'शिक्षक' के नाते विख्यात था और कुलपालक तथा त्यागी एवं स्नेहमयी परिवार के कारण सदा श्रद्धा का पात्र बना रहा। असहयोग आन्दोलन में शामिल होने से घर का नक्शा अवश्य बिगड़ गया था और इसी कारण मुंशी दरबारीलाल जी का देहान्त १९२१ में हो गया था शास्त्री जी की नानी श्रीमती यशोदादेवी जी का भी निधन १९२५ में हो गया था।

शास्त्री जी के मौसा रघुनाथ प्रसाद जी बनारस में ही रहते थे। जहां इनकी माताजी काफी समय तक उनके साथ रहीं। मामा का नाम बिन्देश्वरी प्रसाद तथा मौसी के लड़के का नाम श्री ज्ञानस्वरूप था। श्री शास्त्री जी के दूसरे मामा का नाम पुरुषोत्तमलाल था।

इनकी छोटी वहिन का नाम सुन्दरी देवी था और इनके वहनोई का नाम श्री शम्भूशरण था।

जन्म

वनारस से ७ मील दूर मुगलसराथ की रेलवे कालोनी में श्रीवास्तव कायस्थ परिवार में जब श्रीमती रामदुलारी जी अपने मायके में थीं वहां इस प्रसूति ने एक होनहार वालक को २ अक्तूवर, १९०४ को जन्म दिया।

नाना मुंशी हजारीलाल जी अपने नाती की सूचना प्राप्त कर खुशी में नाच उठे। घर में हर्ष व उल्लास का वातावरण वन गया। प्राईमरी स्कूल का मुख्य-अध्यापक इतना सम्पन्न नहीं होता है और फिर घर पर इतने वड़े कुनवे को पालना एक गम्भीर समस्या होती है। ऐसी अवस्था में एक बच्चे की और वढ़ोतरी होना और भी टेढ़ी समस्या बन जाती है। प्रश्न वालक का नहीं वल्कि जच्चा-वच्चा दोनों की परवरिश करना कठिन समस्या बन जाती हैं, परन्तु इतना होने पर भी घर में खुशी का वातावरण बना हुआ था दो कन्या के वाद पुत्र की प्राप्ती निःसंदेह मां के लिए तो भगवान का वरदान ही था।

नाना ने अपने बड़े दामाद को खुशी की सूचना दी। मुंशी शारदा प्रसाद जी इस सुखद समाचार को पाकर फूले नहीं समाये। ननिहाल और ददिहाल दोनों कुनबे में हंसी-खुशी का वातावरण बन गया।

कई दिनों तक सौहड़ के गीत होते रहे और बताशे बंटते रहे।

सवा महीने बाद प्रसूति बाहर आई।

जन्म-कुण्डली

बालक की जन्म राशि—'सिंह'। नाम लालबहादुर, लग्न में राहु और मंगल विराजमान हैं। द्वितीय अर्थात् धन भाव में सूर्य और बुध हैं। तृतीय भाव में शुक्र हैं। चतुर्थ भाव में यूरेनम और षष्ठम भाव में शनि हैं। सप्तम भाव में केतु, नवम भाव में (जो धर्म भाव भी कहा जाता है) गुरुदेव हैं। कर्म भाव दशम भाव को कहते हैं, उसमें प्लूटो हैं। चन्द्रमा और नेपच्यून आय भाव में हैं और द्वादश, पंचम और अष्टम भाव ग्रहों से रहित हैं।

क्योंकि बालक सिंह राशि में उत्पन्न हुआ अतएव उसमें सुदृढ़ता, अनुशासन के प्रति जागरूकता और पौरुष प्रत्यक्ष रूप से अपना फल प्रदर्शित करेगा।

सिंह राशि वाला जातक अत्यन्त धैर्यवान और शत्रु पर विजय प्राप्त करने वाला होता है। सिंह लग्नवाले इस जातक को मंगल और गुरू का बल प्राप्त है, इसीलिए यह बालक विश्व में यश अर्जित करेगा जो इसके जन्मांग से स्पष्ट सिद्ध होता है।

लग्नेश सूर्य धन भावस्थ रहे हैं। सूर्य उत्तम ग्रह नहीं माने गए हैं। सूर्य अपना प्रभाव सपष्ट दिखावेंगे और कुछ ही वर्ष बाद उन्हें महान कष्ट होगा। सूर्य धन से दूर रखेगा परन्तु हठात् वह शासक के पद पर बैठायेगा। शुक्र उत्तम ग्रह है। वह इसके जीवन को ऊंचा उठाने में सर्वथा सहायक रहेगा।

इस प्रकार उनकी कुण्डली बनाई। बालक होनहार होगा। वह कुनवे का नाम रोशन करेगा परन्तु वह अपने पिता पर भारी है। पण्डित जी ने पत्रा वाचा और अपने तथा ज्योतिष के विचार उस पीले पत्र पर अंकित कर दिए। यह 'लाल' बहादुर व विद्वान् बनेगा।

पिता ने पण्डित जी को दक्षिणा दी। नाना व नानी ने पण्डित जी

की गोद में अपने नाती को डाल दिया। उन्होंने आशीष दे उसे लौटाया, रामदुलारी देवी ने अपने लाल को पण्डित की दुआओं के साथ अपने आंचल में ढक लिया और भगवान का स्मरण कर उसके जीवन को दीर्घायु तथा यशस्वी बनाने की दुआ की। नाना तथा नानी ने न्योछावर कर लड़की को हवन से उठाया। बच्चे को लोगों ने गोदी में दुलारा तथा उसे न्योछावर दी।

गंगा मैया की देन

अभी बालक दो मास का ही हुआ था कि गंगा-स्नान पर्व आया। घर में सभी लोग संगम जाने को उत्सुक थे। सारा परिवार इस पर्व में शामिल होने के लिए जब जाने को तैयार हो गया तो बेटी के विशेष आग्रह पर नाना ने उसे भी साथ ले चलने की आज्ञा प्रदान कर दी।

गंगा पर अपार भीड़ थी। धक्का-मुक्की में लोग कभी इधर तो कभी उधर जा टकराते। तभी एक जोर का धक्का आया और उस धक्के में रामदुलारी देवी की गोद से उसका 'नन्हा' उस भीड़ में गंगा मैया के तट पर कहीं गिर पड़ा।

एक ओर बच्चा गिरा तो दूसरी ओर उसकी मां गिरी। देखते-ही-देखते भीड़ में उस बालक को एक गडरिया उठा ले गया था। मां, नाना, नानी, मौसी सभी उसे तलाश करते-करते जब दुखी हो गए तभी एक व्यक्ति दौड़ा-दौड़ा आया उसने बताया कि उसके पड़ोस में एक गडरिया एक नन्हें से बालक को पाकर बड़ी खुशियां मना रहा है।

सभी लोग दौड़े-दौड़े उस ओर गए। देखते क्या हैं कि एक स्त्री अपने पुराने चीथड़ों में लपेटे इस बालक को गोदी में उठाए नाच रही

है। मां रामदुलारी ने जब उस बालक को देखा तो स्तब्ध रह गई। ममता के आंसू उसकी आंखों से झरने लगे। 'ई तो हमार नन्हे हैं'। कह वह उस स्त्री से बालक लेने लगी। पर वह नहीं मानी।

उस स्त्री का कहना था कि—इसे तो गंगा मैया ने हमारी टोकरी में डाला है। यह तो गंगा मां की देन है। इसे हम कैसे लौटावें।

मां—पागल हुई जा रही थी। उसकी बेसब्री बढ़ती जा रही थी। क्या करे, क्या न करे उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

नाना ने बड़ी युक्ति से बात सम्हाली। इन्होंने समीप ही खड़े एक पुलिस अधिकारी से बात की। उस अधिकारी के कहने पर कि यह तो इनका बच्चा है देती हो या नहीं?

गडरिया परिवार डर गया।

उन्होंने रोते-रोते इस बालक को उसकी मां को सौंप दिया और याचना की कि इस नि:सन्तान को बच्चे को खिलाते रहने की छूट दे दी जाए। जो सभी ने स्वीकार कर लिया और मां अपने 'नन्हे' को घर वापिस ले आई।

पितृ-शोक

भाग्य की विडम्बना थी कि रामदुलारी देवी के विवाह के अभी ८-९ वर्ष ही बीते थे कि शास्त्री जी के पिता मुंशी शारदा प्रसाद जी का यकायक प्लेग से इलाहाबाद में ही १९०६ में स्वर्गवास हो गया। वे अपने पीछे पांच साल की कन्या, डेढ़ साल का एक पुत्र (लाल बहादुर) तथा तीसरी कन्या (जो छ: महीने के गर्भ में थी) छोड़ गए।

ननिहाल का परिवार अथाह शोक-सागर में डूब गया। कोई किनारा उस समय देख पड़ना सम्भव न था। नाना का परिवार दो

युवा भाइयों को खोकर जर्जर हो चुका था कि दुर्भाग्य का दूसरा दौरा हुआ और ज्येष्ठ युवा दामाद भी खो गया। २३ वर्षीय युवा पुत्री श्रीमती रामदुलारी का वैधव्य संताप पिता हजारीलाल जी सहन न कर सके। थोड़े समय के बाद ही उन्हें लकवा का आघात हुआ जिससे कुछ समय तक पीड़ित रहने के बाद अंततः १६०८ में स्वर्गवासी हो गए। लालबहादुर जी के चार व्यक्तियों के परिवार के अतिरिक्त नाना हजारीलाल जी अपने पीछे १० तथा ४ वर्षीय दो कन्याएं तथा ७ वर्षीय १ पुत्र विधवा नानी के साथ छोड़ गए।

इस प्रकार नाना मुंशी दरबारीलाल जी के अकेले कन्धों पर तीन विधवा भावजों और तीन भतीजी-भतीजे के साथ-साथ लालबहादुर जी के भी चार व्यक्तियों के परिवार का पालन-पोषण, शिक्षा, विवाह आदि की जिम्मेदारी उस समय पड़ी, जब वह अपनी सारी व्यक्तिगत जिम्मेदारियों से छुट्टी पा चुके थे। ऐसे त्यागी, तपस्वी, कुल के पालक तथा कर्त्तव्यपरायण नाना के अटूट स्नेहमय वातावरण में लालबहादुर जी का तथा उनके एकमात्र लगभग चार वर्ष बड़े मामा पुरुषोत्तम लाल का साथ-साथ लालन-पालन हुआ। ये दोनों बालपन से ही एक-दूसरे के मित्र, सहयोगी, छोटे-बड़े भाई के समान मामा-भांजे की मर्यादा निबाहते हुए जीवनपर्यन्त चले। लालबहादुर जी के भारत के प्रधानमन्त्री होने के पश्चात् भी किंचित मात्र कभी भी इस सम्बन्ध में कोई अन्तर नहीं आया।

लालबहादुर जी के जन्म-काल के अवसर तक इनके स्वयं तथा नाना के परिवार में जन्म पाने वाले सभी बालक-बालिकाएं उम्र तथा संबंध में इनसे बड़े ही थे। कोई मौसी थीं तो कोई मामा और कोई बड़ी बहन, यहां तक कि इनकी सबसे ज्येष्ठ मौसी श्रीमती श्यामादेवी के भी दो जन्म ले चुके पुत्र इनके बड़े भाई ही ठहरे। इसलिए इनका

स्नेहमय उपनाम नन्हे तथा नन्हकू पड़ा। इसके बावजूद कि अपने पैतृक परिवार में यह सबसे ज्येष्ठ थे। इनके दादा मुंशी नन्दलाल अपने दो छोटे भाई मुंशी रघुनन्दनलाल तथा मुंशी शिवनन्दनलाल में सबसे ज्येष्ठ थे। लालबहादुर जी के पिता श्री शारदा प्रसाद जी अपने सगे भाइयों तथा अपने दो चाचा के सभी सन्तानों में ज्येष्ठ ही थे। स्वयं लालबहादुर जी अपने सभी चाचा की सन्तानों तथा अपने तीनों दादा के पौत्रों में सबसे ज्येष्ठ थे, पर यह एक विचित्रता ही थी कि नाना-नानी के एक स्नेहमय 'नन्हें' नाम से घरेलू जीवन में याद किये गए।

मौलवी से प्रारम्भिक शिक्षा

घर में लालबहादुर जी की नानी ही सारे परिवार की 'अम्मा' थी और नाना दरबारीलाल जी सबके 'चाचा'। पुत्र-पुत्री के भी चाचा, भतीजे-भतीजी के भी चाचा तथा नाती-नतनी के भी चाचा। घर का वातावरण स्नेहयुक्त तथा शान्तिमय सदा बना रहा। कभी छोटे बालकों ने नहीं समझा कि कौन किसका बेटा है। सबका एक ही प्रकार का सम्बोधन 'चाचा और अम्मा' रहता। हां, आपस में दादी, दादा, मामा और मौसी का यथायोग्य सम्बोधन होता और उसके मर्यादा पालन के लिए सब आदेश पाते रहते। श्री लक्ष्मीनारायण, श्री विन्देश्वरी प्रसाद से कुछ बड़े थे। वह साधु प्रकृति के थे। उन्हें पारिवारिक उलझनों से कोई मतलब नहीं रहता था। सुबह से शाम तक स्नान, रामायण-पाठ तथा हनुमान जी की पूजा में ही व्यस्त रहते—न किसी काम की चिन्ता न कोई सिर-दर्द।

'चाचा' और 'अम्मा' इससे इनके लिए दुखी और चिन्तित रहते पर पारिवारिक मर्यादा में उन्हें सदा उचित स्थान मिलता। माता रामदुलारी जी के वह सबसे अधिक स्नेहपात्र सदा बने रहे। कुछ

समय वीतते ही श्री विन्देश्वरी प्रसाद जी ने वहीं, मुगलसराय में ही रेलवे में नौकरी कर ली। वहां रेलवे में उस समय नाना हजारीलाल जी के वहुत से शिष्य थे जिससे सभी की सहानुभूति उनको प्राप्त हुई और विन्देश्वरी प्रसाद जी वहां 'मास्टर साहव' के नाम से ही सम्बोधित होने लगे। इस प्रकार वह अपने पिता का कुछ हाथ बंटाने के योग्य हुए और लालवहादुर जी उनकी देख-रेख में कलम तथा तख्ती संभालने लगे और 'कायदे से' वैठने लगे। नाना के परिवार में पहले मौलवी साहव ही पढ़ने को वैठना सिखाते थे। यह पढ़ना कम था और मौलवी साहव की खिदमत करना ज्यादा शाइस्तगी अर्थात् शिष्टता सीखना, यही शिक्षा का भूषण समाज में स्वीकृत था।

उन्होंने सवसे पहले मौलवी वूदन खां से दीक्षा ली जो मुगलसराय ही के पास के पथरा गांव के निवासी थे। यह हकीम भी थे। इनके सामने पेट के दर्द का वहाना भी कभी लाभप्रद न होता था। लालवहादुर जी को तो कभी फूल की छड़ी से भी इन्होंने नहीं छुआ क्योंकि उनके वह 'नाना मौलवी' थे। लालवहादुर जी मौलवी साहव के यहां जव 'वैठना' सीख रहे थे उस समय लालवहादुर जी शाइस्तगी (शिष्टता) की मूर्ति थे। उर्दू भाषा से उनको दिलचस्पी थी तथा आठवें दर्जे तक वह उर्दू के विद्यार्थी रहे और इसका अच्छा ज्ञान उन्हें हो चुका था। नाना दरबारीलाल जी ने उन्हें उर्दू में उनको पहला पत्र लिखने पर एक उर्दू की पुस्तक इनाम में दी थी, जो इनके पास वहुत दिनों तक रही। आठवें दर्जे के वाद उन्होंने एकाएक अपना विषय उर्दू से हिन्दी कर दिया और परिश्रम से उसका अध्ययन भी किया।

दस वर्ष की आयु में वालक लालवहादुर ने छठी कक्षा पास कर ली और इस प्रकार उनकी प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त हुई।

माली से ज्ञान-बोध

बालक लालबहादुर ५-६ साल के थे। अपने सहपाठियों के साथ वह स्कूल से लौट रहे थे। रास्ते में आम का बगीचा पड़ता था। पेड़ों पर आमों को लटकते देख बालकों की तबियत आ गई—"क्यों न हम आम खावें।" बस क्या था। आसपास से रोड़े-पत्थर उठा-उठाकर वे आम के पेड़ पर मारने लगे और आम गिरते तो वे तुरन्त उठाकर उसे चूसने लगते।

परन्तु एक कोने में लालबहादुर चुपचाप खड़े थे। उनका अन्तः-करण चोरी से आम तोड़कर खाने की गवाही नहीं दे रहा था। वे कुछ सोच कर आगे बढ़े और पास ही गुलाब की टहनी से एक गुलाब का फूल तोड़ लिया तथा विचारते-विचारते उसे सूंघने लगे।

तभी बगीचे का माली डंडा लिये और बच्चों को आम तोड़ते देख उनकी ओर भागा। माली को देख लड़के भाग खड़े हुए, पर 'नन्हा' जहां का तहां खड़ा रहा। माली ने उसे पकड़ लिया और उसके कान खींचकर उसके गाल पर दो-चार थप्पड़ लगा दिए।

नन्हा रुआंसा हो गया और रोते-रोते बोला—"मुझे थप्पड़ क्यों मारा, मैंने तो आम तोड़े ही नहीं तुम्हें पता नहीं मैं बिना बाप का लड़का हूं?"

तब तो तुझे दो थप्पड़ और लगने चाहिए। बिना बाप के बच्चों को तो कभी भी चोरी नहीं करनी चाहिए। तुम्हें अच्छा बच्चा बनना चाहिए।

'नन्हे' देर तक माली को देखता रहा। उसे लगा जैसे उस माली के रूप में उसके जीवन की दिशा बताने वाला कोई गुरू खड़ा है। उसने आंसू पी लिए और जीवन में अच्छा बच्चा बनने का दृढ़ संकल्प मन में कर लिया और वह अच्छा बच्चा बना।

लालबहादुर ही क्यों

लालबहादुर जी अब १०-११ वर्ष के हो चुके थे। उन्होंने एक दिन विचारा कि परिवार में सभी लोगों का नाम प्रसाद व लाल पर है तो पता नहीं उनका नाम 'बहादुर' पर अम्मा ने क्यों रखा।

बालक की जिज्ञासा ने जब तर्क का सहारा लिया तो वह दौड़ा-दौड़ा मां के पास गया और बोला—"अम्मा पता नहीं हमारा नाम लालबहादुर क्यों रखा है। जबकि हमारे यहां तो किसी का नाम बहादुर पर नहीं है। बनारस वाली मौसी के यहां भी कोई बहादुर नहीं है। रामनगर में भी तो सभी लाल-प्रसाद हैं, फिर मेरा नाम इतना खराब क्यों है। मुझे यह नाम अच्छा नहीं लगता।"

समीप ही बैठे मामा ने कहा—क्यों नहीं है देखो इलाहाबाद के नामी वकील हैं 'तेज बहादुर'।

तभी मां रामदुलारी देवी हंसीं और बोलीं—'नन्हे का नाम 'वकील बहादुर' बनने के लिए तुम्हारे जीजा ने नहीं रखा है बल्कि उन्होंने 'कलम बहादुर' बनाने के लिए और मैंने अपने नन्हें को 'करम बहादुर' बनने के लिए इनका नाम 'लालबहादुर' रखा है। मेरा 'लाल' 'बहादुर' बनेगा अपनी हिम्मत व साहस का···"

और इतना कहते-कहते उनकी आंखें डबडबा आईं। पति की स्मृति उनके मानस पटल पर आ गई। पर उन्होंने अपने 'लाल बहा-दुर' को गोद में लिटा अनेकानेक आशीष दे डाले।

इतिहास साक्षी है कि श्री लालबहादुर जी की माता का वह आशीर्वाद सफलीभूत हुआ। श्री लालबहादुर जी को ऐसे अवसरों पर सदा मां का आशीष प्राप्त होता रहा और कठिन दिनों की तपस्या, जेल जीवन की यातनाएं तथा पारिवारिक समस्याएं होते हुए भी वे इनका साहस बढ़ाती रहीं। श्री लालबहादुर जी सहनशीलता,

सुशीलता, शालीनता और विनम्रता के भण्डार थे। उनका धैर्य, साहस, सन्तोष तथा त्याग असीम सागर सिद्ध हुआ।

अम्मा के समझाने पर लालबहादुर जी ने फिर कभी अपने इस नाम पर असन्तोष प्रकट नहीं किया।

२३ वर्षीय मां भी वैधव्य-पीड़ा को अपने कलेजे में छुपाये बैठी थीं कि कब हमारा एकमात्र पुत्र नन्हें सचमुच 'लाल बहादुदर' ही बने।

जातिबोधक नाम का बहिष्कार

लालबहादुर जी आठवीं पास करके अपने मौसा के घर बनारस के दारा नगर मुहल्ले में आकर रहने लगे थे। उनके मौसा मुंशी रघुनाथ प्रसाद तब म्युनिसिपल बोर्ड में हैड क्लर्क के पद पर कार्य करते थे। गंगा स्नान उनका नित्य का कर्म था। कारण कि काशी में तैरने का उस वक्त बड़ा रिवाज था। बहुत कम ऐसे बालक होंगे जिनको तैरना न सिखाया जाता हो। दारा नगर में भी भले घरों के ऐसे कई लड़के थे जो गर्मियों में प्रायः नित्य सायंकाल में गंगाजी जाते थे। उसी समय लालबहादुर जी ने भी तैरना सीखा।

उनका मकान तो रामनगर में है जो बनारस राज्य की राजधानी के रूप में विख्यात था। अब वह वाराणसी जिले में मिला दिया गया है। वहीं बनारस में उनके मामा भी रहते थे। अतः जब उनकी शिक्षा की बात आई तो यही उचित समझा गया कि उन्हें बनारस में ही स्कूल में प्रविष्ट कराया जाए ताकि आने जाने की असुविधा से वे बचे रहें।

जब उनका नाम हरिश्चन्द्र स्कूल में 'लालबहादुर वर्मा' लिखवाया गया तो लालबहादुर जी को यह बात पसन्द नहीं आई। इस १२

वर्ष के बालक के मन में अपनी सामाजिक कुप्रथाओं तथा कमजोरियों को समझने का ज्ञान आ गया था।

उस समय उनके विद्यालय के मुख्य अध्यापक मिर्जापुर के ही श्री वसन्तलाल वर्मा थे। इस बालक ने सगर्व कहा—"मेरा नाम लालबहादुर वर्मा की बजाय उसे शुद्ध करके केवल लालबहादुर होना चाहिए।"

श्री वसन्तलाल वर्मा जी को बहुत आश्चर्य हुआ और उन्होंने कहा—"क्या गलती है, वर्मा क्यों काटा जाए ?"

लालबहादुर वर्मा ने कहा—"जात-पांत मिट जानी चाहिए। इसलिए मैं अपने नाम के साथ जाति का सूचक नाम वर्मा लिखवाना नहीं चाहता।"

इस दलील को मुख्य अध्यापक महोदय ने स्वीकार कर लिया और उन्होंने उनका नाम शुद्ध करके केवल 'लालबहादुर' रहने दिया। छोटे नाना दरबारीलाल इससे खुश तो नहीं थे पर मौसा इससे प्रसन्न हुए और उन्होंने लालबहादुर जी की इस विजय पर उनकी प्रशंसा की तथा बधाई दी।

लालबहादुर जी ने सगर्व कहा कि—"मुझे भी गौरव बना रहा कि मेरे नाम के साथ वह फालतू चीज 'वर्मा' या 'श्रीवास्तव' थी ही नहीं।"

मौसा एवं मामा के परिवार में तथा ननिहाल में कोई भी मादक वस्तु का कोई प्रयोग नहीं करता था और यही कारण था कि लालबहादुर जी इन सब बातों से सदा अछूते रहे—न कभी शराब, न तम्बाकू, न मांस, न कोई और शौक।

उफनती नदी पार की

जब श्री लालबहादुर जी बनारस आ गए और इनको वहीं के हरिश्चन्द्र स्कूल में दाखिल करा दिया गया, जहां वे मन लगाकर पढ़ने लगे।

उन्हीं दिनों की बात है कि काशी में तैरने का बड़ा रिवाज था। बहुत ही कम ऐसे लड़के होंगे जिसको तैरना न सिखाया जाता हो। दारा नगर मौहल्ले में भी भले घरों के ऐसे कई लड़के थे जो गर्मियों में प्रायः नित्य सायंकाल में गंगाजी जाते थे। उसी समय लालबहादुर जी भी तैरना सीख गए थे।

एक बार मेला लगा 'गंगापार'। सभी सहपाठी बच्चों ने वहां जाने का निश्चय किया। सभी की राय पक्की हो गई तो मेले के खर्च के लिए कोई चवन्नी लाया, कोई अठन्नी तो कोई रुपया! अतः लालबहादुर जी भी अपनी माता जी के पास पैसे मांगने गए।

मां उठीं और पल्ले में बंधे पैसों में से कुछ पैसे बालक के हाथ पर रख दिए। बालक ने पैसे गिने और समझ गया, मां पर इससे अधिक पैसे नहीं हैं। पितृहीन बालक हंसा और खुशी-खुशी अपनी मित्र-मंडली में जा मिला।

सभी नाव में बैठे और गंगा पार कर ली। मेले में पहुंचे। मेला जोरों से भरा हुआ था। सभी बच्चे दिन-भर मेला देखते रहे और जब शाम हुई तो वापिस मुड़े। नाव किनारे खड़ी थी, किराया तय किया और सभी उसमें जा चढ़े, पर लालबहादुर किनारे खड़ा रहा। उसके साथियों ने बहुत बुलाया पर वह न आया। वह अपनी लाचारी जानता था जो वह अपने मित्रों पर प्रकट नहीं करना चाहता था। नाव चली गई।

जब नाव आंखों से ओझल हो गई और उसने यह निश्चित कर

लिया कि उसका कोई परिचित इधर नहीं है तो उसने गंगा की उदात्त तरंगों में उछाल लगा दी।

जब वह पानी में कूद पड़ा और तैरने लगा, एक सज्जन ने उसे देखा, उसके अदम्य साहस पर आश्चर्य करने लगा पर उसे दया भी आई। उसकी स्त्री चीख उठी—"कहीं बच्चा डूब न जाय, गंगा बाढ़ पर है।" तभी उस सज्जन के कहने पर नाविक ने नाव को उसकी ओर मोड़ा। सज्जन बोले—"बेटा ! गंगा का पाट बहुत चौड़ा है, तुम थक जाओगे, नाव में आ जाओ।

स्त्री ने उसे बचाने की दृष्टि से हाथ फैलाए। बालक तेजी से तैर रहा था—वह बस इतना ही बोला—"धन्यवाद, ठीक है, मैं पार हो जाऊंगा। मल्लाहों और नाव में बैठे यात्रियों में कानाफूसी हुई। उनका दिल नहीं माना।

बड़े जिद्दी हो, अच्छा नाव को पकड़कर तैरो।

...। चुपचाप वह हाथ मारता रहा।

वाह रे लाल—कितना बहादुर बच्चा है। सभी ने मन-ही-मन सराहना की।

उस सज्जन के आदेश पर मल्लाह नाव उसके समीप ही चलाते रहे, संकट में सहायता देने हेतु। पर देखते-ही-देखते वह नदी पार कर गया।

इतनी छोटी सी उम्र, गंगा की भयंकर बाढ़, इतने बड़े तूफान में भी वह विचलित हुए बिना गंगा को पार कर गया।

सभी यात्री अवाक् उसे देखते रहे।

किनारे आते ही उसने अपने कपड़े निचोड़े, उन सबको नमस्ते कर तेजी से घर की ओर दौड़ पड़ा।

घर पहूंचते ही वह मां को देख ठिठक गया। 'कैसे भीग गया

मेरा नन्हूं'। मां लड़के बड़े शरारती होते हैं कहकर वह अन्दर गया और कपड़े उतार कर अंगोछा लपेटा और मां को सारी दास्तां सच-सच सुना दी। उसने मां से कभी झूठ नहीं बोला और कभी कुछ छुपाया भी नहीं था।

मां निहाल हो गई अपने 'नन्हकू' के गुण देखकर। उसने उसे सीने से लगा लिया और शून्य में खो गई।

कुछ दवा पी लेने के बाद जब मां उसे सुलाने के लिए उसे सहला रही थीं कि मां ने बड़े स्नेह से अपने लाल से पूछा—"क्यों रे नन्हे तू मुझे इतना मानता है और मेरे पीछे-पीछे घूमा करता है। एक दिन जब तुम्हारा ब्याह हो जाएगा तब तो तुम मुझे छोड़ दोगे और इस तरह मेरी पूछ नहीं करोगे।"

पता नहीं क्या सोचकर मां ने अपने नन्हे से यह बात कही।

अबोध बालक उस भाव को तो नहीं समझ सका पर वह उठा और मां को तुरन्त उत्तर दिया—"अम्मा ऐसा नहीं होगा। मैं तुम्हें कभी नहीं छोड़ूंगा।" कहकर वह मां से लिपटकर रोने लगा।

पितृहीन बालक को रोते देख मां का दिल भी भर आया और उनके आंसू भी नहीं थमे और उसी अवस्था में दोनों को कब नींद आ गई, किसी को पता नहीं लगा।

अभाव बाधक नहीं

पिता की मृत्यु के पश्चात् लालबहादुर को सूनापन-सा अनुभव होता था। उनका जी चाहता था वह भी अन्य बच्चों की तरह खूब हंसी-खुशी और मिल-जुलकर खेलें कूदें। पर स्वभाव से संकोची होने के कारण वे अकेले बैठे रहते और अपनी कक्षा में चुपचाप रहते। कुछ तो इस कारण कि सभी अपने माता-पिता की बातें करते, मेरे

पिताजी इतना कमाते हैं, इतना खर्च करते हैं, ऐसे रहते हैं, वैसे रहते हैं आदि, पर यह कैसे कहे—पिता तो हैं ही नहीं और दुर्भाग्य कि उसने अपने पिता को देखा ही नहीं था—जब वह डेढ़ वर्ष का ही था कि पिता चल बसे थे। मां थी। वह भी आर्थिक व मजबूर हालत में दबी अपने पीहर रहती थीं, हालांकि उनके मान-सम्मान में कोई कमी नहीं थी परन्तु पति के घर में उसका सर्वाधिकार था—और पिता के घर में उतनी स्वतंत्रता नहीं थी। तो भी परिवार में सब हिल-मिलकर रहते थे। मां को जो उनके नाना खर्च देते थे उसी से वह अपने 'नन्हे' को खुश रखती थीं।

लालबहादुर अल्पायु थे पर भगवान की कृपा उनकी समझ-बूझ अद्वितीय थी और स्वाभिमान भी बहुत था। पढ़ने में वह बहुत मेधावी व तेज थे और यही कारण था कि पं० निष्कामेश्वर मिश्र जी उनसे बहुत ही अधिक प्रभावित थे। उनसे इनकी गरीबी छुपी नहीं थी।

एक दिन की बात है सभी स्काउटिंग के सिलसिले में पिकनिक पर जाने वाले थे। कक्षा के सभी छात्रों ने अपना नाम लिखवा दिया। पर लालबहादुर चुप रहे। पण्डित जी ने पूछा—"तुम पिकनिक नहीं चलोगे।" संकोची बालक ने कहा—"मास्टर जी मेरे पास तो···। पैसे कम हैं। परन्तु मास्टर निष्कामेश्वर जी ने उसे भी साथ चलने के लिए कहा और वे पिकनिक पर गए।"

वहां निर्णय हुआ कि हाईकिंग पर जाने से पूर्व बच्चों के पास जितने पैसे हों वे सब एक जगह इकट्ठे किए जाएं और उस सम्मिलित राशि से जलपान किया जाए।

लालबहादुर जी की धोती की गांठ में तीन पैसे बंधे हुए थे। पैसे उन्होंने बहुत छिपाकर और सम्भालकर रक्खे हुए थे। उनको संकोच

करते देख और लड़कों ने जबरदस्ती उन्हें पकड़ लिया और तलाशी ली तो उनकी धोती की गांठ से वे पैसे निकल पड़े। बेचारे लाल-बहादुर जी लज्जा से गड़ गए। उनको अपनी गरीबी पर ग्लानि-सी आ रही थी, क्योंकि और लड़कों ने अधिक पैसे दिए थे और कुछ ने तो एक या दो रुपये तक दिए थे।

बाद में लालबहादुर जी ने पूछने पर बताया कि—"उनके नाना ने करीब दो महीने पहले मुझे चार पैसे दिए थे। उसमें से एक पैसा तो मैंने अपनी मां को दिया और यही तीन पैसे बचे हुए थे।" यह कहते-कहते उनकी आंखों में आंसू आ गए।

पं० निष्कामेश्वर मिश्र जी पर इसका बड़ा प्रभाव पड़ा। उनकी आंखों में भी ममता के आंसू झलक पड़ने लगे। उन्होंने लालबहादुर जी को सीने से लगा लिया और स्नेह से उनकी पीठ सहलाने लगे और उसकी इस सच्चाई व निष्ठा की प्रशंसा की।

और अवसर पाकर पं० निष्कामेश्वर जी ने उनसे एक दिन कहा—"तुम मेरे लड़के को पढ़ाया करो और उस दिन से लाल-बहादुर जी नियमित रूप से पण्डितजी के पुत्र को पढ़ाने जाया करते थे और वे उन्हें पारिश्रमिक रूप में ५ रुपये महीना देने लने लगे। इन पांच रुपयों के बदले में लालबहादुर जी ने अपने गुरू की बड़ी दिल से सेवा की तथा सच्ची लगन से इन्होंने उनके पुत्र को भी पढ़ाया। इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि वह सदा अपने गुरू के सबसे प्रिय शिष्य बने रहे।"

लालबहादुर जी की विलक्षण बुद्धि थी। वे पढ़ने में बहुत तेज थे। उनकी इस लगन को देख अध्यापक बहुत ही अधिक प्रभावित हुए। उन्होंने उन्हें पत्र-पत्रिकाओं के पढ़ने का भी सुझाव दिया।

मिश्र जी अध्यापक ही नहीं थे बल्कि वे एक कर्मशील तथा गुणी

व्यक्ति थे। पुस्तकीय ज्ञान देने के अतिरिक्त वे छात्रों के चरित्र-निर्माण का भी विशेष ध्यान रखते थे। छात्रों के अन्तःकरण तक पहुंच कर उनकी सुप्त चेतना को जाग्रत करना ही उनका मुख्य उद्देश्य था। इसलिए वे राणाप्रताप, शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह, तिलक तथा गांधी जी की जीवनियां भी सुनाया करते थे और वीरता, त्याग तथा स्वातंत्र्य की भावना भरा करते थे तथा देश-प्रेम की दीक्षा देते थे और इसी का यह परिणाम था कि लालवहादुर जी का सर्वतोन्मुखी प्रतिभा का विकास हुआ और उनके जीवन की पृष्ठभूमि दृढ़ देशभक्ति से परिपूर्ण बनी।

असहयोग आन्दोलन में

उन्हीं दिनों भारत में 'रोलट ऐक्ट' के लागू होने से सर्वत्र अशान्ति की लहर दौड़ गई थी और नेताओं द्वारा उसकी घोर निन्दा की गई। स्थान-स्थान पर विरोध सभाएं आयोजित की गईं।

उधर अमृतसर के जलियां वाला वाग में इस 'काले-कानून' के विरुद्ध एक विशाल जन-सभा की गई। क्रूर अंग्रेजी हकूमत ने बिना चेतावनी दिए निर्दोष जनता पर गोलियों की वर्षा कर दी। सैकड़ों लोग उस आततायी जनरल डायर की क्रूर नीति के शिकार हुए। नर-नारियों की लाश देखते-देखते पट गईं। हजारों व्यक्ति घायल हुए। यह समाचार लालवहादुर ने भी सुना। उनका खून खौल गया। वह विदेशी सरकार के इस नर-हत्याकण्ड से बड़े दुखी हुए।

इधर सारा देश मानों अत्याचार की आग में जल रहा था। सभी उत्तेजित थे। अतएव इस नन्हे वालक का मन भी तीव्र संघर्ष के लिए उद्वेलित हो उठा। वे अभी दसवीं कक्षा के छात्र थे, किन्तु जब महात्मा गांधी के नेतृत्व में देश भर में असहयोग आन्दोलन चला कि

सब लोग सरकार से असहयोग करें, स्कूल-कालिज छोड़ दें, असेम्बलियों का बायकाट करें, टैक्स न दें, लगान न दें और इस ब्रिटिश सरकार के पैर उखाड़ने के लिए उसे सर्वथा पंगु बना दें—इस भावना ने इस बालक हृदय को भी झकझोर दिया और वह इस महान् राष्ट्र नेता के आह्वान पर सर्वस्त्र निछावर करने को तत्पर हो गया।

घर वालों ने बहुत समझाया—हम गरीब हैं तुम पढ़-लिख जाओगे चार पैसे कमाओगे तो सबको सहारा मिलेगा पढ़ाई छोड़कर मुसीबतों को निमंत्रण मत दो।

पर वह जिद्द का पक्का बालक नहीं माना। उसने स्कूल का बहिष्कार कर दिया और आन्दोलन में कूद पड़े।

असहयोग आन्दोलन पूरे जोरो पर था। गांधी जी के नेतृत्व में देश का बच्चा-बच्चा मर-मिटने को तैयार था।

भारतमाता की जय !

महात्मा गांधी जिन्दाबाद !

टोड़ी बच्चा हाय ! हाय !

के गगन भेदी नारों के बीच राष्ट्रीय नेताओं के साथ टोलियां की टोलियां निकलतीं। विदेशी वस्त्रों की सार्वजनिक रूप से होली जलाई जाती और आन्दोलन अपना नया रूप धारण कर लेता। क्रान्ति के इन मतवालों को दबाने के लिए बेंत व लाठी प्रहार किये जाते। गोलियां चलतीं, पर इन दीवानों पर उनका कोई असर न पड़ता। तिरंगा झण्डा लिए, सर से कफन बांधे इन स्वयंसेवकों की भीड़ आगे बढ़ती, उधर अश्रुगैस व गोलियां चलतीं। कुछ क्षण के लिए गोलियां कुछ ग्रुपों में बदलती बिगड़तीं, फिर पुनः वे एकत्रित्र हो नए जोश व नई उमंग से नारे लगाते हुए दौड़ पड़ते।

लालबहादुर भी कई सभाओं में सम्मिलित होते और यदा-कदा

भाषण देकर लोगों में जोश भर देते और फिर राष्ट्र नेता की टोली के साथ मिलकर अन्डर-ग्राउण्ड हो कांग्रेस आन्दोलन में सक्रिय कार्य करने में जुट जाते ।

यह उनका प्रथम सार्वजनिक जीवन था, जिसमें उन्होंने विजय पाई और यश अर्जित किया ।

वे शीघ्र ही अन्य साथियों की भांति वन्दी वना लिए गए । ढाई वर्ष की जेल-यातना भोगने के वाद जव लालवहादुर जी वाहर आए तो उनका भव्य स्वागत किया गया । उन्होंने अपने को इसी रचनात्मक कार्य में लगा लेने की कामना की; परन्तु हितैषियों ने उन्हें समझाया कि पहले वे अपनी अधूरी शिक्षा पूरी कर लें, फिर निश्चिन्त होकर देश-सेवा में लगें । लालवहादुर जी को यह वात भा गई और उन्होंने इस बात को उचित समझा कि उच्च शिक्षा प्राप्त किए बिना वह देश की सेवा ठीक-ठीक नहीं कर पायेंगे । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने अपनी अधूरी शिक्षा पूर्ण करने का निश्चय कर लिया ।

शास्त्री बने

अव नेताओं के सामने यह प्रश्न आया कि उन छात्र-छात्राओं का जिन्होंने भारी संख्या में स्कूल व कालिजों का वहिष्कार कर इस राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिया था, उनकी शिक्षा कैसे पूर्ण कराई जाए । कारण कि वे विद्यालय इन 'विद्रोही' छात्रों को पुनः विद्यालय में लेने को तत्पर नहीं थे । इसलिए यह एक देश-व्यापी समस्या सामने आई ।

बड़े विचार और सूझबूझ के बाद यह निर्णय किया गया कि इस समस्या के समाधान के लिए बनारस में 'काशी विद्यापीठ' तथा

लाहौर में 'नेशनल कॉलिज' नामक दो शिक्षा-संस्थान स्थापित किये जाएं। इन दोनों संस्थानों में जहां एक ओर शिक्षा-प्रणाली राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत हो, वहां इनके अध्यापक-प्राध्यापक भी उच्च-कोटि के विद्वान् व राजनीतिज्ञ हों। अतएव डॉ० भगवानदास, डॉ० सम्पूर्णानन्द, आचार्य कृपलानी, आचार्य नरेन्द्र देव, श्री श्रीप्रकाश जैसे प्रभृति विद्वानों के संरक्षण में इस काशी विद्यापीठ का संचालन, शिक्षण एवं संयोजन किया गया।

पूज्य महात्मा गांधी जी ने १० फरवरी, १९२१ को काशी विद्यापीठ की स्थापना की। इसी विद्यापीठ में लालवहादुर जी ने हिन्दी, अंग्रेजी तथा दर्शन-शास्त्र की उच्च शिक्षा ग्रहण कर स्नातक (शास्त्री) की डिग्री प्राप्त की।

सन् १९२५ में श्री लालवहादुर जी ने काशी विद्यापीठ से 'शास्त्री' की उपाधि प्राप्त की। फिर यही डिग्री (स्नातक) शास्त्री उनके नाम के साथ जुड़ गए और लोग उन्हें 'लालबहादुर शास्त्री' के नाम से सम्बोधित करने लगे। धीरे-धीरे यह उपाधि उनके नाम का महत्वपूर्ण नाम वन गया जिसे विश्व ख्याति मिली।

राजनैतिक जीवन में प्रवेश

यद्यपि श्री शास्त्री जी की देश के राजनैतिक जीवन में रुचि तो तभी से जागृत हो गई थी जब वे केवल १७ वर्ष की अवस्था के थे। महात्मा गांधी के आह्वान पर अपनी पढ़ाई को तिलांजलि देकर वे असहयोग आन्दोलन में कूद पड़े थे; तथापि अपनी सम्पूर्ण शक्ति और उत्साह से राजनीति में प्रवेश उन्होंने तभी किया जब विभिन्न प्रभावशाली व्यक्तियों से प्रेरित होकर देश के जीवन और राजनैतिक समस्याओं के प्रति पैनी अन्तर्दृष्टि प्राप्त कर ली। यौवन के द्वार पर ही

अनुभवों की शाला में कठोर प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया। अपने विस्तृत अनुभवों एवम् दर्शन, समाज-शास्त्र व इतिहास आदि पर काशी विद्यापीठ में अर्जित ज्ञान से लैस होकर वे ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध युद्ध करने वाराणसी से निकले।

सन् १९२५ में उनका परिचय देश के सर्वोच्च स्तर के नेता देशभक्त लाला लाजपतराय जी से हुआ। वे लोक सेवक समाज (सर्वेन्टस् ऑफ दी पीपुल सोसाइटी) के संस्थापक थे। यह समाज ऐसे राष्ट्रीय स्वयंसेवकों को प्रशिक्षित कर उन्हें रचनात्मक कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करता था। इस संस्था का उद्देश्य—ऐसे राष्ट्रीय स्वयंसेवकों को भरती करना और शिक्षा देना था जो देश की शैक्षणिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक उन्नति के लिए कार्य करें।

लाला लाजपतराय जी उन दिनों लोक सेवक समाज के संगठन और उसके क्रियाशील स्वयंसेवकों की खोज के लिए बनारस में काशी विद्यापीठ आये हुए थे। यहीं पर लाला जी से पहली भेंट शास्त्री जी की हुई। शास्त्री जी उनकी संस्था से बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने इस समाज की नियमित सदस्यता स्वीकार कर ली।

शास्त्री जी को मेरठ के कुमार आश्रम में रहकर हरिजनों की सेवा का कार्य सौंपा गया। इसके बाद ही उन्होंने सबसे पहले मुजफ्फरनगर जिले में दलितों और हरिजनों का सेवा कार्य आरम्भ किया और बीच-बीच में वे मेरठ, सहारनपुर आदि स्थानों में भी जाते रहे। इस संस्था में रहकर शास्त्री जी ने बड़ी लगन और सच्चाई के साथ इस कार्य को अपनाया। उन्होंने पूरी तन्मयता के साथ अपने को अछूतों, दलितों, किसानों और मजदूरों की सेवा में लगा दिया और बड़ी निष्ठा के साथ खादी तथा चर्खे का प्रचार किया।

सन् १९२८ में हुए पुलिस लाठी प्रहार से पीड़ित लाला जी का स्वर्गवास हो गया और उनके स्थान पर राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन जी इस लोक सेवक समाज के अध्यक्ष बने। टंडन जी की आज्ञा से ही श्री शास्त्री जी ने अपने क्षेत्र में कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं में भी रचनात्मक कार्य करने की प्रवृत्ति जागृत की।

इधर शास्त्री जी की माता रामदुलारी देवी अपने बेटे को अकेला अपनी आंखों से ओझल होते देखना नहीं चाहती थीं; इसीलिए उन्होंने भी निश्चय कर लिया कि वह भी अपने बेटे के पास रहकर लोक-सेवा करेंगीं और इसीलिए वह बनारस से मुजफ्फरनगर आ गईं और वहीं रहकर उन्होंने अपने बेटे की देखभाल के साथ-साथ अनेक युवकों की भी सेवा-सत्कार करनी शुरू कर दी, जो इस पुनीत कार्य में संलग्न थे, वह उन सभी लोगों को अपने बेटे के समान ही खाना खिलाने में सुख अनुभव करतीं। यही नहीं बल्कि वे सारे युवक भी शास्त्री जी की माताजी से बहुत अधिक प्रभावित हो गये थे। वह उनसे सगी मां जैसा प्यार पाकर निहाल हो उठते थे।

लोक सेवक समाज के सदस्य के रूप में शास्त्री जी ने जो भी रचनात्मक कार्य किए उनसे यह सिद्ध हो गया कि उनमें अपने देश की सेवा करने की क्षमता है। वे स्वयं भी इस तथ्य को स्वीकार करते थे—"लोक सेवक समाज की आजीवन सदस्यता के कारण ही मुझे अपने देश की अधिकाधिक सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ। इस समाज ने ही 'लोक-सेवक' का वास्तविक अर्थ समझाया।" अपने मीठे स्वभाव और प्रेमपूर्ण व्यवहार से शास्त्री जी ने शीघ्र ही मुजफ्फरनगर के सारे जिले के कार्यकर्ताओं का मन मोह लिया था और उन सबकी अगाध श्रद्धा शास्त्री जी के प्रति हो गई थी।

शास्त्री जी इस लोक सेवक समाज के आजीवन सदस्य बन गये थे और उन्होंने अपने जीवन को देश की सेवा में समर्पित कर दिया था। वह अपने तन-मन-धन से इस पुनीत कार्य में जुट गये थे जो उन्हें सौंपा गया था। इस संस्था की ओर से उन्हें ६० रु० का मासिक भत्ता दिया जाता था और उसी में वह अपने समस्त परिवार का जीवन निर्वाह करते थे।

प्रथम राजनीतिक गुरू—टंडन जी

राजर्षि टण्डन जी लालबहादुर शास्त्री जी के प्रथम राजनीतिक गुरू थे और अपने कठोर-परिश्रम, सद्व्यवहार तथा ईमानदारी से कार्य करने की क्षमता में ही शास्त्री जी को टण्डन जी का विश्वास-पात्र शिष्य सिद्ध कर दिया था। वे ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जो श्री टण्डन जी के कठिन स्तर के अनुरूप सिद्ध हो सके।

लाला जी के देहान्त के बाद जब लोक सेवक समाज के अध्यक्ष राजर्षि पुरुषोतम दास जी टण्डन बने तो उनकी आज्ञा से ही शास्त्री ने मुजफ्फरनगर छोड़ कर इलाहाबाद को अपना कार्य-क्षेत्र बनाया और तभी से श्री लालबहादुर शास्त्री जी का स्थायी निवास इलाहाबाद हो गया।

शास्त्री जी पर टण्डन जी का विशेष स्नेह था। उसका एक कारण यह भी था कि टण्डन जी स्वयं बड़े ईमानदार और सच्चे-देश सेवी थे और वे बहुत ही सरल एवं सीधे-सादे भाव से जीवन बिताते थे, इन्हीं गुणों को जब उन्होंने श्री शास्त्री जी में भी देखा, तब उन्हें आंतरिक प्रसन्नता हुई और फलस्वरूप वह दिन-प्रति-दिन उनकी ओर खिंचते गए।

वैसे तो शास्त्री जीं सन् १९२०-२१ में ही कांग्रेस में आ चुके थे

और असहयोग आंदोलन में भाग लेने के कारण जेल की यात्रा भी कर आए थे, किन्तु कांग्रेस के साथ उनका स्थायी और घनिष्ठ सम्बंध तब जुड़ा जब वह स्थायी रूप से इलाहाबाद में रहने लगे और टण्डन जी इस हीरे की परख करते रहे और वह अपनी सच्ची आभा से चमकता ही गया और इस प्रकार अपने गुण के सान्निध्य में सेवा का क्षेत्र भी बढ़ाते रहे।

कार्य-क्षेत्र प्रयाग

अपने राजनैतिक गुरु श्री टण्डन जी की आज्ञा से श्री शास्त्री जी इलाहाबाद रहने लगे और तभी से इलाहाबाद (प्रयाग) उनका स्थायी कार्य-क्षेत्र बन गया और पक्का निवास भी।

इलाहाबाद में रहकर शास्त्री जी ने हरिजनों के बीच कार्य करके जहां टण्डन जी का विश्वास अर्जित किया वहां दूसरी ओर श्री नेहरू जी का दीर्घकालीन साहचर्य भी मिला। इसके कई कारण थे—पहला यह कि लोक सेवा समाज के सदस्य के रूप में किये गए उनके सफलतापूर्ण कार्य से नेहरू परिवार में शास्त्री का मान होने लगा। दूसरा—यह कि कांग्रेस के आंदोलनों में सक्रिय भाग लेने से उनका सम्पर्क नेहरू जी से अधिक आने लगा। तीसरा—यह कि आनन्द भवन में राजनैतिक उच्च नेताओं के सम्पर्क में आने से शास्त्री जी को नगर कांग्रेस का सचिव बनने तथा इसके अलावा इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के सचिव और फिर प्रधान बनने का अवसर प्राप्त हुआ।

इस प्रकार श्री लालबहादुर शास्त्री अपने कार्य, लग्न तथा परिश्रम के कारण मान-सम्मान पाते हुए अपनी प्रतिभा से ऊंचे उठते गए और तभी से वह नेहरू जी के प्रति अगाध श्रद्धा रखने लगे और ज्यों-

ज्यों वे नेहरू जी के अधिक सम्पर्क में आने लगे त्यों-त्यों नेहरू जी का शास्त्री जी पर विश्वास जमने लगा और २५ वर्षीय इस ईमानदार, कर्मठ कांग्रेसी कार्यकर्ता के रूप में सर्वत्र चर्चा के कारण सम्मान पाते रहे और आगे बढ़ते रहे।

शास्त्री जी में उपजी देशभक्ति की भावना दिनों-दिन दृढ़ होती गई और वे जिले के प्रतिनिधि के रूप में प्रान्तीय कांग्रेस में जा पहुंचे जिसके कारण शास्त्री, पं० गोविन्द बल्लभ पन्त, श्री रफी अहमद किदवई और अन्य राष्ट्रीय नेताओं के भी सम्पर्क में आए। इन राष्ट्रीय एवं उच्च नेताओं के, जिनमें अब श्री टण्डन जी एवं श्री नेहरू जी थे शास्त्री जी के कार्य, क्षमता तथा परिश्रम एवं ईमानदारी के प्रशंसक हो गए थे, इन नेताओं के सम्पर्क एवं प्रशंसा के कारण उनकी तेजस्विता कंचन की भांति चमक उठी और वे प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के मंत्री बना दिये गए।

धीरे-धीरे उनकी लोकप्रियता उनके गुणों के कारण और भी चमक उठी और कुछ ही समय पश्चात् वह अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी में पहुंच गए और वे पं० जवाहरलाल नेहरू जी, श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन जी तथा पं० गोविन्दवल्लभ पन्त जी के अत्यन्त विश्वसनीय कार्यकर्त्ता के रूप में माने जाने लगे तथा नेहरू जी के वे दाहिने हाथ बन गए।

पूरे ३८ वर्ष तक इलाहाबाद का यह नगर शास्त्री जी का अपना कर्मक्षेत्र बना रहा। यहीं उन्होंने अपने जीवन के सर्वोत्तम वर्ष बिताए। यहीं से उन्होंने स्वतन्त्रता के संग्राम में सात बार जेल-यात्राएं कीं। यहीं राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन जी का वरदहस्त उन्हें प्राप्त हुआ और यहीं मानव रत्नों के पारखी पं० जवाहरलाल नेहरू जी ने उन्हें अपने सान्निध्य में रखकर एक अनमोल लाल बना दिया।

शास्त्री जी ने लोक सेवक की जिम्मेदारियां लेकर इलाहाबाद से ही सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया और जीवन-पर्यन्त वे अपने कार्य व अपने प्रति सच्चे ही बने रहे और कोई भी व्यक्ति उनके प्रति किसी भी प्रकार की उंगली नहीं उठा सका।

विवाह

शास्त्री जी के जीवन का यह दूसरा मोड़ था, जो १९२७ में आया। मां रामदुलारी देवी चाहती थीं एक सहारा। ऐसा सहारा जो उनके बुढ़ापे की लाठी बने और उनके बेटे की अर्धांगिनी ताकि उसके 'नन्हे' के जीवन में भी आनन्द का, सुख का मोड़ आ जाए।

वैसे विवाह के लिए शास्त्री जी सदा से ही उदासीन थे। इसका मुख्य कारण उनकी आर्थिक स्थिति थी और वह नहीं चाहते थे कि कोई स्त्री उनकी अर्धांगिनी बनकर बेबसी और दरिद्रता का जीवन बिताए।

दूसरी बात यह थी कि वह अपना जीवन राष्ट्र-सेवा के लिए समर्पित कर चुके थे और आजीवन वह लोक सेवक समाज के माध्यम से दलितों और पीड़ितों की सेवा का व्रत ले चुके थे। अतएव उनका मार्ग कंटकाकीर्ण मार्ग बन गया था और वह नहीं चाहते थे कि कोई स्त्री जीवन के वह सुख न भोग सके जो वह चाहती हो, जो उसे उनके कारण उस सुख से वंचित रहना पड़े।

पर मां का आग्रह इन सब परेशानियों से ऊपर था वह मां की बात टाल नहीं सके। परिणामस्वरूप मिर्जापुर निवासी श्री गणेशप्रसाद जी की सुपुत्री ललितादेवी से सन् १९२७ में उनका विवाह हो गया।

विवाह के समय श्री लालबहादुर शास्त्री जी की आयु २३ वर्ष की

थी और ललितादेवी जी की आयु १७ वर्ष की थी।

विवाह के सम्बन्ध में दो बड़े ही रोचक संस्मरण हैं।

पहला संस्मरण जो शास्त्री जी के मामा श्री पुरुषोत्तम लाल जी के कथनानुसार है—"बनारस में मेरी शादी थी। लालबहादुर लाहौर से आए थे। यह बात सन् १९२६ की है।" मुझे खाने पर एक घड़ी ससुराल से मिली। मैं चाहता था कि खाने पर लालबहादुर भी साथ रहते, पर तब वह विद्यापीठ चले गए थे। वापस आने पर मैंने वह घड़ी उनके हाथ में बांध दी। उन्होंने खुश होकर कहा—यह क्या? मैंने कहा—यह तुम्हारे लिए है। आभारी होकर कहने लगे—मुझे तो हमेशा नाना-नानी, मामा-मामी से ही मिला है, पर आपके पास भी तो नहीं है। मेरे हाथ पर एक घड़ी बंधी थी, मैंने उसे दिखाकर कहा कि इसे क्या मंगनी की समझते हो? ठेकेदारी में सबसे पहले घड़ी ही तो खरीदी है। वह खुश हो गए और मेरा पैर छूकर बैठ गए। मैं आशीर्वाद देता हुआ कह बैठा—घबराओ नहीं, शीघ्र ही तुम्हारी बारी है। वह मुस्करा दिए। हुआ भी ऐसा ही। सन् १९२८ में मिर्जापुर में ही उनकी शादी हुई। मुझे गर्व है कि मिर्जापुर में मैंने अपने घर में पहली पतोहू श्रीमती ललिता को ही उतारा था। इस अवसर पर उनकी मामी ने कहा—विवाह हो गया, अब तो खुश हो न।

हाजिरजवाब शास्त्री जी ने तुरंत कहा—"विवाह तो पहले ही हो चुका था, जब घड़ी मिली थी। मामी शरमा गईं। उनके पास कोई जवाब नहीं था।"

दूसरी रोचक दास्तां है ललिता जी की—यह तब की बात है जब ललिता जी १७ वर्ष की थीं कि एक दिन उनकी भाभी ने एक लड़के का फोटो दिखलाते हुए उनसे पूछा था—"बबुनी देखो तो यह लड़का

तुम्हें पसन्द है ?" ललिता जी ने कनखियों से फोटो देखते हुए लजा-कर कहा था—"धत् ! हम क्या जानें।" इस पर भाभी ने गम्भीर होकर कहा—"नहीं बहुनी, बहुत सोच-विचार कर कहो । बात यह है कि वह लड़का तो बहुत अच्छा है पर इसका एक पैर हमेशा जेल में रहता है। इन लोगों पर कभी डंडे बरसते हैं, कभी गोली बरसती हैं तो कभी घोड़े दौड़ते हैं—पता नहीं कब क्या हो जाय—ऐसे में बहुत सोच-समझकर ही काम करना चाहिए। तभी तो तुम्हारे भैया ने हमें तुमसे पूछने को कहा है।" ललिता जी ने पैर के अंगूठे से जमीन कुरेदते हुए दृढ़ता से जवाब दिया था—"भौजी, तुम लोग मेरी जनम के साथी हो, करम के साथी नहीं। अगर मेरे भाग्य में सुख होगा तो मुझे हर हालत में सुख मिलेगा और अगर दुःख होगा तो तुम लोग मुझे सुख दिला नहीं सकते, बड़े जो ठीक समझें, करें।"

भाभी ने जाते-जाते एक शरारती मुस्कान फेंक अपनी ननद को चिढ़ाते हुए कहा था—"हां, औरत चाहे तो आदमी से क्या नहीं करा सकती।"

और ललिता जी की शादी लालबहादुर जी से हो गई। पति के रूप में उन्होंने देवता को पा लिया था। विवाह के पश्चात् ललिता जी शास्त्री जी के मन और विचारों की छाया बन गईं। उन्होंने सारे कष्ट अपने ऊपर चुपचाप ले लिए परन्तु पति को उसके पथ से कभी विचलित नहीं होने दिया और न ही कभी उनके पथ में बाधा ही आने दी। संकटों और अभावों की आंधियों के बीच भी वे सन्तोष की ओट किए अपने परिवार को सुखी रखने का प्रयास करती रहीं और एक सती-साध्वी स्त्री के समान वे पति की सेवा में दिल लगाए रहीं।

उन दिनों कायस्थ परिवार में लेन-देन की प्रथा जोरों पर थी। मां अपने बेटे और बहू को समृद्धशाली भी देखना चाहती थीं। अतः

मां के आग्रह को वह टाल न सके और एक शर्त पर विवाह करने को राजी हुए कि दहेज नहीं लूंगा।

मां ने स्वीकारोक्ति दी।...'ठीक है' और मुस्करा दीं। शास्त्री जी ने विवाह किया और दहेज में एक चर्खे और थोड़े से खादी के कपड़ों के अतिरिक्त उन्होंने कुछ भी स्वीकार नहीं किया।

जिस दिन ललितादेवी ने लालबहादुर जी के घर में सहमते-सकुचाते हुए प्रवेश किया तब उन्होंने शास्त्री जी की इतनी सरलता, स्पष्टता व भोलेपन को देखकर अपने पर गर्व किया और उधर शास्त्री जी ने भी यह सौभाग्य समझा कि ललिता जी के रूप में उन्हें एक सच्ची संगिनी मिली है।

विवाह के कुछ ही दिनों बाद शास्त्री जी का परिवार इलाहाबाद चला गया और वहीं वे स्थायी रूप से रहने लगे। पहले-पहल बहू के रूप में ललितादेवी अपनी ससुराल रामनगर गईं और वहां कुछ दिन रहकर इलाहाबाद चली आईं। वहां से वह फिर रामनगर गईं और वहीं उनकी सबसे बड़ी पुत्री 'कुसुम' का जन्म हुआ। इसके बाद उनके और सभी बालक—हरिकृष्ण, सुमन, रामकृष्ण, मोहनकृष्ण और गोपालकृष्ण इलाहाबाद में ही जन्मे।

ललिता जी पर प्रभाव

मसहरी की चादर और सर्दी की रात—पढ़ने-लिखने के बाद जब लालबहादुर जी की नौकरी इलाहाबाद में लगी, उनके घर कुछ रिश्तेदार आये। कड़ी सर्दी के दिन थे। शास्त्री जी की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। उनके पास पर्याप्त बिस्तर भी नहीं थे। रात को सारे रजाई, कम्बल और बिस्तर सम्बन्धियों को दे दिये गए। शास्त्री जी और उनकी पत्नी ललितादेवी जी के लिए कुछ नहीं बचा।

ऐसी स्थिति में क्या किया जाए।

आखिर, शास्त्री जी को एक तरकीब सूझी। उनके पास एक कोट पड़ा था। वह उन्होंने ललितादेवी जी को ओढ़ने के लिए दे दिया और अपने लिए दो मसहरियां जोड़कर चादर बना ली। ललितादेवी जी ने बहुत कहा कि आप कोट ओढ़ लीजिए और मुझे मसहरियां दे दीजिए, पर वह नहीं माने और उन्होंने मसहरियों के साथ एक पतली-सी चादर जोड़कर ओढ़ ली और सारी रात बिता दी।

ललितादेवी जी ने एक भेंट में इस घटना का वर्णन करते हुए कहा, "विवाह के आरम्भिक दिनों में ही मैंने जब शास्त्री जी के दिल में दूसरों के लिए अपने सुख का त्याग करने की ऐसी भावना देखी, तो इसका मुझ पर भी बहुत असर पड़ा क्योंकि मुझे भी तो अपने आप को उनके ही अनुसार ढालना था।

दो पैसे की डबल रोटी—कुछ दिन बीते। शास्त्री जी और ललितादेवी जी फिर इलाहाबाद में अकेले रह गए। शास्त्री जी ने अपनी माता जी को अपनी बहन के पास भेज दिया था, जिन पर वैधव्य-दु:ख का पहाड़ अल्पायु में ही आ पड़ा था।

अचानक ललितादेवी जी को बुखार आने लगा। उन्हें हर रोज़ दोपहर को बुखार आ जाता था। शाम को बहुत तेज हो जाता था और सवेरे तक उतर जाता था। घर में कोई नौकर या सहायक तो था नहीं। अतः शास्त्री जी स्वयं ही ज्वर में निढाल पड़ी ललिता जी की सेवा-सुश्रूषा करते थे। अपने लिए वह बाजार से दो पैसे की डबल रोटी ले आते थे और उसे दूध के साथ खाकर पेट भर लेते थे। यह डबल रोटी भी वह दो दिन चलाते थे।

सहायता के लिए उन्होंने माता जी को नहीं बुलाया, क्योंकि उन्होंने बहन की जरूरत को ज्यादा महत्व दिया।

सादा भोजन—शास्त्री जी सदा मितभोजी रहे। उनका भोजन सादा भी बहुत होता था। प्रधानमंत्रित्वकाल तक वह बिना मक्खन के सिके हुए डबल रोटी के एक-दो टोस्ट या रोटी और उबालकर घी में भुनी हुई सब्जी का ही भोजन करते थे। मौसम्मी और आलू उन्हें ज्यादा पसन्द थे। शाकाहरी तो वह थे ही, मिर्च-मसाला भी बहुत कम खाते थे।

पति-पत्नी द्वारा सत्याग्रह

वैसे तो शास्त्री जी सन् १९२०-२१ में ही कांग्रेस में आ चुके थे और असहयोग आन्दोलन में भाग लेने के कारण जेल-यात्रा भी कर आए थे। परन्तु इनकी पत्नी ने सन् १९३० में ही शास्त्री जी के समान पहली बार राजनीति में प्रवेश किया। यह घटना उस समय की है जब मई-जून, १९३० के दिन थे।

नमक-सत्याग्रह की धर पकड़ जारी थी। महिला सत्याग्रहियों का जत्था श्रीमती कमला नेहरू के नेतृत्व में विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर लगन से धरना दे रहा था। कमला जी बड़ी स्पष्ट वक्ता थीं। एक दिन उन्होंने सभी कार्यकर्ताओं से नाम ले-लेकर पूछा—"आपकी पत्नी धरना देनेवाली सत्याग्रहियों में शामिल है ?"

जिन्होंने 'हां' कही सो ठीक जिन्होंने 'नहीं' कहा उन्हें फटकार खानी पड़ी, क्यों नहीं उन्हें भेजते हैं, घर में बन्द करके रखेंगे और तुम—लालबहादुर जी—'तुम्हारी पत्नी' ? शास्त्री जी ने शरमाए हुए उत्तर दिया—"मैंने बड़ा प्रयत्न किया, लेकिन मुंह खोलकर सबके सामने बाहर निकलकर, पिकेटिंग करने का वह अपने में साहस नहीं ला पातीं। बहुत ही लजीली किस्म की हैं। आप अपने अधिकार से उन्हें बाहर लाकर पिकेटिंग में शामिल कीजिए।"

ठीक है—कमला जी ने मुस्करा कर कहा। कमला नेहरू जी दूसरे ही दिन शास्त्री जी के निवास-स्थान 'लीडर रोड' पर गईं जहां शास्त्री जी रहते थे और श्रीमती शास्त्री को विदेशी वस्त्रों की दुकानों पर धरना देने के लिए खड़ा कर दिया। लजाती, सकुचाती, शरमाती और आधा घूंघट निकाले श्रीमती ललिता जी ग्राहकों से हाथ जोड़ कर प्रार्थना करतीं कि 'वे विदेशी कपड़ा न खरीदें।' तब उनके आधे शब्द बाहर निकलते और आधे मुंह में ही खो जाते।

शास्त्री जी ने सत्याग्रह कार्यालय में एक कर्मठ कार्यकर्ता विश्वंभर पांडेय जी से कहा—"कमला जी ने हमारी श्रीमती को सत्याग्रहियों में भरती कर लिया है। पहला दिन है, मालूम नहीं उन पर क्या बीत रही होगी।" और वे दोनों व्यक्ति उन्हें देखने गए।

श्रीमती ललिता जी को पिकेटिंग करते देख शास्त्री जी का चेहरा प्रसन्नता से खिल उठा। इसी बीच एक झगड़ालू दुकानदार ने श्रीमती ललिता को उलाहना देते हुए कहा—आप हमसे कहती हैं कि हम विलायती वस्त्र न बेचें। ग्राहकों से कहती हैं कि वे विदेशी वस्त्र न खरीदें, लेकिन आप स्वयं जो विलायती चूड़ियां पहने हुए हैं।

श्रीमती शास्त्री का मुख-मण्डल खिन्नता और ग्लानि से लाल हो गया। पूछा—"ये चूड़ियां विलायती हैं ?"

दुकानदार बोला—"बिल्कुल सोलह आने।" और उस दुकानदार ने जोर-जोर से चिल्लाकर भीड़ इकट्ठी कर ली। तभी शास्त्री जी भी वहां जाकर खड़े हो गए।

श्रीमती शास्त्री ने अपने पति से कहा—"दुकानदार कहते हैं मेरी चूड़ियां विलायती हैं।" शास्त्री जी ने संगत स्वरों में कहा—"विलायती हैं तो तुम्हारे हाथ में नहीं होनी चाहिए।"

पति-पत्नी में एक नजर में सारी बातें हो गईं। श्रीमती शास्त्री ने

दुकान पर पड़े लोहे के गज को उठाकर हाथों पर मार लिया। चूड़ियां झड़कर नीचे गिर गईं। झगड़ालू दुकानदार सन्न रह गया। उसे काटो तो खून नहीं। तभी दोनों पति-पत्नी का चेहरा प्रसन्नता व गर्व से चमक उठा।

दूसरे दिन शास्त्री जी ने कहा—"हमारी श्रीमती जी ने तो पहले दिन ही इतनी कीर्ति अर्जित कर ली है कि जो मैं बरसों नहीं कर पाया।" अगले दिन शास्त्री जी ने भी सत्याग्रह कर दिया।

श्रीमती शास्त्री ने एक घटना का वर्णन करते हुए बताया—"सन् '३०-३१ में एक बार जब शोलापुर में मार्शल-लॉ लगा था तब मेरी बड़ी लड़की होनेवाली थी। घर-पकड़ का जोर था, सो मैंने शास्त्री जी से कहा—"आप मत जाओ घर की स्थिति ठीक नहीं है।" नहीं माने तो हमने कहा—"हम भी चलेंगे।" तब शास्त्री जी बोले—"तुमने हमें गाली दे दी होती तो इतनी चोट नहीं लगती जितनी तुम्हारी इस बात से लगी है।" बस, हमने कान पकड़ लिए कि अब कभी ऐसा नहीं कहेंगे, जिससे वे खुश रहें, वही करेंगे।

इसके बाद वे जेल गए—आर्थिक दशा गड़बड़ा गई, दो बच्चे मर गए दवा नहीं मिल पाने से। पर हम दोनों एक-दूसरे के सच्चे साथी बने दुख भोगते रहे और देश-सेवा करते रहे।

वचन के पक्के

यह बात उन दिनों की है जब शास्त्री जी नैनी जेल (इलाहाबाद) में बन्दी थे। उनकी पुत्री पुष्पा बीमार हुई। कुछ ही दिनों में उसकी दशा चिन्तनीय हो गई। प्रयाग के साथियों ने शास्त्री जी पर दबाव डाला कि वह जेल के बाहर जाकर अपनी पुत्री की देख-रेख करें। शास्त्री जी राजी हुए। उनकी पैरोल भी स्वीकृत हो गई, पर शास्त्री

जी ने उस पैरौल पर छूटने को अस्वीकार कर दिया, क्योंकि उसके अनुसार शास्त्री जी को यह लिख कर देना था कि वह जेल के बाहर जाकर आन्दोलन के समर्थन में कुछ न करेंगे। उधर लड़की जीवन और मृत्यु की लहरों में गोते खाने लगी, इधर शास्त्री जी अपने स्वदेशाभियान पर दृढ़ थे आखिर जिलाधीश शास्त्री जी की नैतिक चारित्रिक दृढ़ता पर द्रवित हो उठा। उसने शास्त्री जी को बिना किसी शर्त से मुक्त कर दिया। शास्त्री जी घर पहुंचे, पर उसी दिन बालिका के प्राण-पखेरू उड़ गए। शास्त्री जी अन्तिम क्रिया करके लौटे—घर के भीतर किसी से मिलने भी न गए, सामान उठाकर तांगे में बैठ गए। लोगों ने बहुत कहा अभी तो पैरौल बाकी है। पर शास्त्री जी ने उत्तर दिया—"मैं जिस कार्य के लिए पैरौल पर छूटा था वह खत्म हो गया है। इसलिए सिद्धान्ततः अब मुझे जेल जाना चाहिए।" और वह जेल चले गए।

एक वर्ष पश्चात् शास्त्री जी का बड़ा पुत्र 'हरि' बीमार पड़ा। शास्त्री जी एक सप्ताह के पैरौल पर छूटे। जाने का दिन आया—बच्चे को १०४ डिग्री बुखार था। शास्त्री जी कुछ देर तक उसकी चारपाई के पास खड़े होकर उसकी ओर देखते रहे। जिलाधीश का सन्देश मिला कि शास्त्री जी यदि लिखित वचन दें कि वह आन्दोलन-कारियों से सम्पर्क न रखेंगे तो उनकी पैरौल बढ़ाई जा सकती है। पर शास्त्री जी ने जिलाधीश की शर्त अस्वीकार कर दी। ज्वरा-क्रान्त हरि 'बाबू जी, बाबू जी' कहकर चीख उठा। पर शास्त्री जी ने पुनः मुड़कर बच्चे की ओर न देखा।

पुत्र के प्रति ऐसी कठोर अनाशक्ति इतिहास के पृष्ठों में भी बहुत कम दिखती है, पर शास्त्री जी अपनी संतानों को कष्टों की आग में आह-ऊह करते हुए देखकर भी, कर्म की साधना सदा करते रहे।

यही वह विशेषता है जिसने शास्त्री जी को कभी स्वजन, परिवार, आत्म-रीत और जीत तथा बंधु-बांधवों के मोह में आग्रस्त होने नहीं दिया।

निष्कलंक-कार्य

लखनऊ की बात है। वह मंत्री-परिषद् पर प्रतिष्ठित थे। उनकी ज्येष्ठ कन्या कुसुम के पारिग्रहण की बातचीत श्री कौशलकुमार (जो उसके पति हैं) से चल रही थी। श्री कौशलकुमार पी० सी० एस० की परीक्षा में उत्तीर्ण हो चुके थे, पर उस वर्ष डिप्टी-कलैक्टरी के पदों के लिए निर्वाचित करके शेष को अन्य विशिष्ठ पदों के लिए चुना जाना था। श्री कौशलकुमार का नाम दूसरे वर्ग के उत्तीर्ण छात्रों की सूची में अच्छे स्थान पर था, किन्तु जब शास्त्री जी के पास यह सूची गई, तब शास्त्री जी ने दूसरे छात्रों के नामों के सामने चिह्न लगा दिए पर श्री कौशलकुमार का नाम छोड़ दिया। कदाचित् भूल हो गई हो, तत्सम्बन्धी अफसर ने दूसरी बार पुनः सूची शास्त्री जी के सामने प्रस्तुत की पर शास्त्री जी ने पुनः दूसरी बार भी श्री कौशलकुमार के नाम के आगे चिह्न नहीं लगाया। किसी प्रकार शास्त्री जी के मामा श्री पुरुषोत्तमलाल जी के कानों में यह खबर पड़ी। उन्होंने शास्त्री जी के पास जाकर कहा कि यदि लड़के को यह बात मालूम हो गई कि उसका होनेवाला श्वसुर उसे उसके न्यायोचित अधिकार से भी वंचित कर रहा है, तो फिर विवाह होने से रहा, किन्तु शास्त्री जी रंचमात्र भी न हिले। उन्होंने यह कहकर अपने मामा को निरुत्तर कर दिया कि चाहे जो हो पर मैं अपनी कलम से कुछ न करूंगा और उन्होंने कुछ न किया। आज भी श्री कौशलकुमार को गर्व से यह कहने का अवसर प्राप्त है कि वह जो

पहुंचे हैं, केवल अपनी योग्यता से बने हैं।

सक्रिय राजनीति में

शास्त्री जी की देश-भक्ति की भावना अब तक पूर्ण रूप से जा चुकी थी। उन्होंने इलाहाबाद में लगानबन्दी अभियान प्रारम्भ क उसी समय राजनीति में कूद पड़ने का निर्णय कर लिया। तब इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के सचिव थे, किन्तु इसके पूर्व उ और उनके युवा साथियों को इस प्रस्ताव पर मोतीलाल जी की स्वी कृति प्राप्त करनी थी, क्योंकि क्रान्तिकारी गतिविधियों के औचि पर उनका मत संदिग्ध था। अन्तत: शास्त्री जी को अपने कार्य लिए उनकी मौन स्वीकृति प्राप्त करने में सफलता मिल ही गई औ अभियान प्रारम्भ हो गया।

स्थिति पर नियन्त्रण रखने के लिए सरकार इस आन्दोलन क विरोध करने के लिए कटिबद्ध थी। आन्दोलन का सामना करने लिए सभी आवश्यक उपाय काम में लाये गए। शास्त्री जी ने इलाह बाद के पास एक गांव में उत्तेजनापूर्ण भाषण दिया, जिसमें ग्रामी को लगान न देने के लिए उकसाया गया। प्रतिक्रियास्वरूप शास जी को सरकार ने बन्दी बना लिया तथा अपराधी घोषित कर ढ वर्ष की सजा दे दी गई।

१९३० से १९४५ तक शास्त्री जी ब्रिटिश सरकार से निरन्त संघर्ष करते रहे और इस अवधि के अधिकांश वर्ष जेल में गुजारे १९३० के पश्चात् १९३२, १९३४, १९४१ और १९४२ में वे जे गये। कुल मिलाकर सात बार में ९ वर्ष जेल में व्यतीत किए।

अन्य कांग्रेसी नेताओं के समान ही शास्त्री जी के बन्दी जीवन भी उन्हें ज्ञान की अभिवृद्धि करने का सुअवसर प्रदान किया। वास्त

में ब्रिटिश बन्दीगृहों ने उनके मन एवं बुद्धि को सर्वाधिक लाभ पहुंचाने में विश्वविद्यालय का कार्य किया। एक अवसर पर अपने बन्दी जीवन के संस्मरण सुनाते हुए उन्होंने कहा था—"मैंने स्वयं को राजनीतिक संघर्ष में झोंक दिया था। हर आन्दोलन में मुझे जेल जाना पड़ा और एक दृष्टिकोण से तो मेरा वन्दी जीवन बड़ा ही रोचक था, क्योंकि वहां रहकर मैं खूब अध्ययन करता था।"

जेल में रहकर उन्होंने कान्ट, हीगल, हेरॉल्ड जे० लास्की, वर्टेंड रसेल तथा अल्डूयस हक्सले के दर्शन के अतिरिक्त मार्क्स और लेनिन के राजनैतिक विचारों का अध्ययन किया। वहीं पर उन्होंने मादम क्यूरी की जीवनी का हिन्दी अनुवाद भी किया और इस प्रकार से जेल में रहकर अपने समय का पूरा-पूरा सदुपयोग किया। इसके अतिरिक्त अपने सद्व्यवहार, अनुशासनप्रियता एवं नियमबद्धता के कारण एक ओर जहां आदर्श बन्दी के रूप में उन्होंने प्रसिद्धि पाई, वहीं दूसरी ओर अपने इन गुणों से उन राजनैतिक वन्दियों पर, जो उपद्रवी थे और तनिक सी घटना को लेकर झगड़ पड़ते थे, बड़ा अच्छा प्रभाव डाला। अपने उदाहरण से वे अपने साथियों को नियम और अनुशासन में रहने के लिए प्रेरित करते थे तथा उनका अनुकरण कर दूसरे लोग भी अपना समय पढ़ने और लाभदायक बातों पर वहस करने में व्यतीत करते थे।

इस प्रकार से बन्दी जीवन उनके लिए वरदान सिद्ध हुआ। एक ओर हर बार जेल से नया ज्ञान और अनुभव लेकर लौटते थे दूसरी ओर कांग्रेस में उनकी स्थिति ऊंची उठती जाती थी।

उत्तर प्रदेश विधान सभा के सदस्य

समय गुजरता गया। घटना-चक्र आगे बढ़ता गया। प्रान्तों को

स्वायत्तता देने हेतु ब्रिटिश संसद ने सन् १९३५ में एक नया भारती
शासन अधिनियम पारित किया। इस अधिनियम द्वारा प्रारम्भ कि
गए सुधारों के अनुसार सन् १९३७ में कांग्रेस ने प्रान्तीय विधा
सभाओं के लिए चुनाव लड़ा और लगभग सभी विधान सभाओं
भारी बहुमत प्राप्त किया। बाबू पुरुषोत्तमदास की सिफारिश प
शास्त्री जी को भी कांग्रेस की ओर से एक टिकिट मिल गया। उनक
प्रतिद्वन्द्वी कांग्रेसी उम्मीदवार को देशी रियासतों से सम्बन्धित हों
के कारण अस्वीकृत कर दिया गया। शास्त्री जी ने चुनाव जीतक
उत्तर प्रदेश विधान सभा की सदस्यता प्राप्त कर ली। वे विधा
सभा में यद्यपि अमहत्वपूर्ण 'बैंक बेंचर' ही रहे तथापि स्वतन्त्रत
आन्दोलन के प्रमुख नेता श्री पंत का ध्यान अपनी ओर आकर्षित क
लेते थे।

फिर द्वितीय विश्व-युद्ध और 'अंग्रेजो भारत छोड़ो' आन्दोल
प्रारम्भ हो गया। कांग्रेस सैद्धान्तिक रूप से युद्ध में इंग्लैंड के सा
थी। वह उसके युद्ध के उद्देश्य को भी स्वीकार करती थी। मित्र
राष्ट्रों ने, जिनमें इंग्लैंड भी शामिल था, घोषणा की थी कि संसा
में नाजीवाद और फासीवाद से लोकतन्त्र और स्वतन्त्रता की रक्षा
और प्रतिष्ठा हेतु युद्ध करना है। कांग्रेस का मत था कि जब त
भारत में भी उन सिद्धान्तों का पालन नहीं किया जाता, वह युद्ध मे
ब्रिटेन का साथ नहीं देगी। अपना विरोध प्रदर्शित करते हुए कांग्रेस
ने सभी प्रदेशों से त्यागपत्र दे दिया और इस प्रकार ढाई वर्ष के
शासन काल के पश्चात् कांग्रेस ने सत्ता से सन्यास ले लिया।

एक वर्ष तक असन्तोष की चिनगारी अन्दर-ही-अन्दर सुलगती
रही। १९४० में विनोबा भावे द्वारा व्यक्तिगत सत्याग्रह के श्रीगणेश
से इसका विस्फोट हुआ। शीघ्र ही उन्हें कैद कर लिया गया। फि

जवाहरलाल नेहरू को विनोबा भावे का अनुसरण करना था किन्तु उन्हें पूर्व ही गिरफ्तार कर लिया गया। उसके बाद अन्य सत्याग्रहियों को भी गिरफ्तार कर लिया गया। उनमें से ही लालबहादुर शास्त्री भी थे, जिन्हें एक वर्ष की सजा दी गई। १९४१ तक सामान्य कांग्रेस जन के भाग लेने से यह आन्दोलन चरम सीमा तक पहुंच गया। लगभग १४,००० सत्याग्रही वन्दी बनाये गए।

ब्रिटिश सरकार की दमन नीति ने कांग्रेस को शान्त करने के स्थान पर और भी उग्र बना दिया। १९४२ में अगस्त के प्रथम सप्ताह में बम्बई में अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी का अधिवेशन बड़े ही उत्तेजक वातावरण में प्रारम्भ हुआ। ८ अगस्त को अत्यन्त विचार-विमर्श के बाद 'भारत छोड़ो' का ऐतिहासिक प्रस्ताव पारित किया गया। पासा फेंक दिया गया था। बढ़े चरण लौट नहीं सकते थे। महात्मा गांधी ने देशवासियों को 'करो या मरो' का नया नारा दिया।

८ अगस्त को पारित प्रस्ताव में कहा गया—"भारत से ब्रिटिश शासन का तुरन्त अन्त होना चाहिए। यह सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है, जिस पर युद्ध का भविष्य तथा स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र की सफलता निर्भर है। स्वतन्त्र भारत इस उद्देश्य की प्राप्ति का आश्वासन दे सकेगा, क्योंकि वह अपने सभी साधनों को स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए और फासीवाद, नाजीवाद और साम्राज्यवाद के आक्रमण के विरुद्ध लगा देगा। यह केवल युद्ध के भविष्य को ही प्रभावित नहीं करेगा, अपितु समस्त पराधीन और उत्पीड़ित मानवता को संयुक्त राष्ट्र संघ के पक्ष में एकत्रित करेगा। भारत अपने इन मित्र राष्ट्रों को विश्व का नैतिक और आध्यात्मिक नेतृत्व प्रदान करेगा। पराधीन भारत ब्रिटिश साम्राज्यवाद का प्रतीक है और साम्राज्यवाद का दूषण संयुक्त राष्ट्र संघ के भविष्य को प्रभावित करेगा।"

इस प्रस्ताव में लोगों से अहिंसा के मार्ग पर और ध्वंसात्मक वृत्तियों से दूर रहकर सामूहिक आन्दोलन छेड़ने का अनुरोध किया गया। ९ अगस्त को आन्दोलन की प्रमुख शक्ति—महात्मा गांधी को गिरफ्तार कर लिया गया और उनके बाद ही कांग्रेस के अन्य प्रमुख नेताओं को भी गिरफ्तार कर लिया गया। इनकी गिरफ्तारी ने जनता में रोष फैला दिया और देश भर में उपद्रव भड़क उठे।

कुछ कांग्रेसी नेता जो अभी तक स्वतन्त्र थे, सरकार की निगाह से बचने के लिए भूमिगत हो गये और वहीं से अहिंसक गुरिल्ला युद्ध का संचालन करने लगे। उन्हीं में शास्त्री जी भी थे। गिरफ्तारी से बचने के लिए वे बम्बई में कांग्रेस कमेटी के स्मरणीय अधिवेशन से लौटते हुए इलाहाबाद के स्थान पर नैनी स्टेशन पर ही उतर गए। नैनी स्टेशन पर उन्हें बन्दी बनाने के लिए पुलिस तैनात थी। अतः प्रमुख द्वार से पुलिस को चुनौती देकर भाग निकलने के स्थान पर उनके मित्रों ने उन्हें रेलवे प्लेटफार्म की रेलिंग पर से ही उठा लिया। यद्यपि वे अपने सहयोगियों की सहायता से पुलिस की निगाह से बच निकले तथापि खतरे से बाहर नहीं थे। उन्होंने अनुभव किया कि यदि बाहर रह कर स्वतन्तत्रापूर्वक कार्य करते रहे, तो गिरफ्तार हो जायेंगे, अतः वे भूमिगत हो गये। भूमिगत कार्यकताओं को नियत कार्यों के आदेश व निर्देश देते हुए वे गुप्त रूप से विचरण करते रहे, किन्तु अधिक समय तक पुलिस के जाल से नहीं बच सके। एक दिन प्रातःकाल के समय जब काऩून का उल्लंघन करने हेतु वे एक उग्र भाषण दे रहे थे पुलिस ने उन्हें देख लिया व बन्दी बना लिया।

शास्त्री जी को नैनी जेल में रखा गया। कैद की इस अवधि में उनके चरित्र की कुछ असाधारण विशेषताएं सामने आईं। उनके सह-बन्दी जेल अधिकारियों की मौन अनुमति से बहुत सी बाहरी वस्तुएं

प्राप्त करते थे जबकि शास्त्री जी ने किसी भी बाहरी वस्तु को स्वी-

कार करने से दृढ़ता से इन्कार कर दिया। जेल के नियमों के अनुसार जो भी कुछ मिलता, उन्हीं से वे सन्तुष्ट रहते थे। यद्यपि उन्हें 'बी' वर्ग में रखा गया था तथापि वे अपनी रसद 'सी' वर्ग के कैदियों के साथ लेना पसन्द करते थे।

पुलिस और परिवहन मंत्री

शास्त्री जी की अविवाद्य ईमानदारी और अनिन्द्य चरित्र से श्री गोविन्द वल्लभ पंत अत्यधिक प्रभावित थे। १९४६ के निर्वाचन के पश्चात् जब वे उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री बने तो उन्होंने शास्त्री जी को सी० बी० गुप्ता के साथ संसदीय सचिव नियुक्त किया। राज्य सरकार द्वारा उठाये जानेवाले कदमों का राजनीतिक प्रभाव ज्ञात करने के लिए पंत जी उन्हीं पर निर्भर थे।

१९४७ में पंडित पंत ने, जिनके आधीन रहकर उन्होंने राजनैतिक प्रशिक्षण प्राप्त किया था, उन्हें पुलिस और परिवहन मंत्रालय को सौंपकर सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश का गृहमंत्री बना दिया। वह बड़ा नाजुक समय था। चारों ओर साम्प्रदायिक उपद्रव भड़क रहे थे जिसने लोगों को विक्षिप्त कर दिया था। इस बात का श्रेय शास्त्री जी को ही था कि उन्होंने प्रतिकारात्मक नीति अपनाने से इन्कार कर दिया।

गृहमंत्री

उन दिनों पुलिस विभाग एक कुख्यात विभाग था, जिसमें कोई भी मंत्री लोकप्रियता प्राप्त न कर सका, किन्तु शास्त्री जी इसके अपवाद थे। वे उत्तर प्रदेश के पहले गृहमंत्री थे जिन्होंने प्रदर्शनकारी भीड़ को तितर-बितर करने के लिए पानी की बौछार का प्रयोग किया।

१६४६ में लखनऊ विश्वविद्यालय के छात्रों ने हड़ताल कर दी और

जब वे जोश में उन्मत्त हो गये तब भी शास्त्री जी ने स्थिति को नियन्त्रण में करने के लिए पुलिस को लाठी प्रयोग की अनुमति नहीं दी। इसके स्थान पर पानी की बौछार का प्रयोग करने का आदेश निकला। इसका परिणाम अनुकूल ही हुआ। उनके इस प्रयोग में उनकी मौलिक सूझ-बूझ और उनके मानवीय दृष्टिकोण के दर्शन होते हैं।

इस प्रकार की एक घटना उत्तर प्रदेश में और घटी थी, जब एक प्रदर्शनकारी भीड़ ने पुलिस जत्थे पर आक्रमण कर दिया और स्थिति नियन्त्रण से बाहर हो गई। शास्त्री जी ने पुलिस द्वारा आत्मरक्षा के लिए किये जा रहे प्रतिकारात्मक कार्यों के विरुद्ध तुरन्त आदेश दिए। परिणामस्वरूप दर्जनों पुलिसवालों के सिर व अन्य स्थानों पर ईंट व रोड़ों की चोट लगीं और उन्हें अस्पताल में भर्ती कराया गया। शास्त्री जी ने अस्पताल का दौरा कर पुलिसवालों के प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त की। इस घटना का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा और वे निरन्तर इसी प्रश्न का हल खोजते रहे कि क्या उन्होंने उचित कदम उठाया था?

वर्षों बाद जब शास्त्री जी भारत के गृहमंत्री थे, लोकसभा में इस घटना का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि जब जीवन खतरे में हो तब आत्म-रक्षा के लिए प्रतिकार न करना पुलिस वालों के लिए काफी कठिन है। प्रसोपा के सदस्य श्री नाथपाई ने उन्हें टोकते हुए कहा—"खेद तो यह है कि आपके समान साहस व दृष्टि वाले लोग भी तो हमारे यहां नहीं हैं।"

शास्त्री जी ने गृहमंत्री के रूप में अत्यधिक साहस व दूरदर्शिता से अपने कर्तव्यों का पालन किया और न केवल अपने सहयोगियों में

अपितु उत्तर प्रदेश की जनता में भी अत्यन्त लोकप्रिय हो गये, किन्तु वे अधिक समय तक उत्तर प्रदेश में नहीं रह सके। भाग्य उन पर मुस्करा रहा था और ईश्वर उनसे राष्ट्रीय मंच पर और अधिक महान् कार्य कराना चाहता था। शास्त्री जी ने एक रात में ही अखिल भारतीय राजनीति में प्रवेश पा लिया।

श्री नेहरू व श्री टण्डन के सम्बन्ध कभी अच्छे नहीं थे। कांग्रेस अध्यक्ष होने के नाते टण्डन जी ने श्री नेहरू को किदवई आदि विद्रोही व विश्वासघाती व्यक्तियों को केबिनेट में लेने से मना किया। श्री नेहरू ने न केवल किदवई को अपने सहयोगियों में से पृथक् किया, अपितु कांग्रेस की कार्यकारी समिति से भी त्याग-पत्र दे दिया। इनके इस कार्य ने परिस्थितियों को उनके अनुकूल कर दिया। श्री नेहरू से मतभेद अधिक उग्र हो जाने तथा सक्रिय सहयोग के अभाव में कांग्रेस का कार्य सुचारु रूप से न चलने के कारण उन्होंने स्वयं कांग्रेस-अध्यक्ष-पद से त्याग-पत्र दे दिया और श्री नेहरू को कार्य-भार सौंप दिया।

कांग्रेस के महामंत्री

जब सन् १९५० में श्री टंडन के त्याग-पत्र देने के उपरान्त श्री नेहरू कांग्रेस अध्यक्ष बने, तब कांग्रेस महामंत्री की नियुक्ति का प्रश्न सामने आया। बंगाल के तत्कालीन मुख्यमंत्री बी० सी० राय ने श्री शास्त्री को इस पद पर नियुक्त करने की सलाह दी, क्योंकि वे ही श्री टंडन और श्री नेहरू और उनके अनुयायियों के मध्य कड़ी बन सकते थे। उनका मत था कि उनकी नियुक्ति कर देने से कार्यसमिति का कार्य भी आसान हो जायेगा। अतः श्री नेहरू ने श्री शास्त्री को महामंत्री नियुक्त किया।

यद्यपि इस घटना ने शास्त्री जी के जीवन को एक नया मोड़ दिया, किन्तु अब दोनों के प्रति उनकी निष्ठा में कशमकश थी। एक ओर लोक सेवक समाज के अध्यक्ष श्री टंडन से उनके सम्बन्ध बहुत पुराने थे। वे उनके गुरु थे, दूसरी ओर श्री नेहरू उनके परामर्शदाता और उनके आदर्श थे। वे बड़े असमंजस में थे। अन्ततः शास्त्री जी ने उत्तर प्रदेश के मंत्रीपद से त्याग-पत्र देकर कांग्रेस महामंत्री के रूप में दिल्ली जाने का निर्णय लिया।

महामंत्री का पद स्वीकार करने के पश्चात् शास्त्री जी का श्री टंडन से सम्बन्ध प्रायः टूट गया और वे पूर्ण रूप से नेहरू के पक्ष में हो गए।

"राजनैतिक वातावरण में उग्र परिवर्तन आने का कारण श्री पटेल की मृत्यु थी। यद्यपि इसके पूर्व श्री टंडन के बहुत से कट्टर समर्थकों ने उनका साथ छोड़ दिया था, क्योंकि वे जानते थे कि श्री पटेल के बाद श्री टंडन के लिए परिस्थितियां अनुकूल नहीं होंगी। उनकी पुरानी रुचियां और अतिनैतिक विचारधारा कोई प्रभाव नहीं उत्पन्न कर सकेंगी। श्री पटेल की मृत्यु ने श्री नेहरू के लिए मार्ग साफ कर दिया और वे कांग्रेस संगठन के सर्वोच्च सत्ताधारी बन गये। वे लोग जो पहले भी टंडन और श्री पटेल के पक्ष में थे, अब श्री नेहरू के आस-पास एकत्रित होने लगे। निश्चित ही इन सबके पीछे राजनैतिक अवसरवादिता की झलक मिलती है। कामराज जो पहले श्री पटेल की ओर थे, अब श्री नेहरू के पक्के समर्थक बन गये। परिवर्तन के पीछे मैसूर के श्रीनिवास मल्लया का हाथ था और कांग्रेस महामंत्री के रूप में उन्हें इसका यथेष्ठ पुरस्कार भी मिला। शास्त्री जी के सम्बन्ध में आज भी यह बात तो निश्चित रूप से कही जा सकती है कि श्री टंडन को उनके श्री नेहरू के पक्ष में जाने पर आपत्ति नहीं

थी, किन्तु श्री नेहरू के प्रति उनके पूर्ण समर्पण का ढंग उन्हें अवश्य अरुचिकर था। निश्चित ही वे श्री टंडन और उनके समर्थकों का दृष्टिकोण श्री नेहरू को स्पष्ट करने में असफल रहे। श्री टंडन व श्री नेहरू में परस्पर अविश्वास होते हुए भी शास्त्री जी दोनों के विश्वासपात्र थे। यह तथ्य श्री टंडन के विचार श्री नेहरू को स्पष्ट कर देने के नैतिक उत्तरदायित्व से, विशेषतः ऐसे अवसर पर जब दोनों में मतभेद होता, उन्हें मुक्त नहीं करता।"

कुछ अपवादों को छोड़ दिया जाए तो शास्त्री जी ने वही किया जो वैसी स्थिति में कोई और व्यक्ति करता। वे जानते थे कि उनके सामने उज्ज्वल भविष्य है तथा दो प्रतिद्वन्द्वी व्यक्तियों के आपसी मनमुटावों में अकारण पड़कर वे उसे नष्ट नहीं करना चाहते थे। अतः उन्होंने बुद्धिमत्ता का मार्ग अपनाया एवं अपने भविष्य-निर्माण की ओर अग्रसर हुए। इस तथ्य को पूर्णतः अंगीकर करते हुए कि श्री नेहरू में ही उनका भविष्य निहित है और श्री नेहरू ने भी उन पर पूर्ण विश्वास रखा। धीरे-धीरे यह विश्वास बढ़ता गया, क्योंकि अपने विगत जीवन में शास्त्री जी स्वयं को एक समन्वयकारी एवं शान्ति-प्रिय व्यक्ति सिद्ध कर चुके थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने श्री नेहरू को यह संकेत देकर कि श्री पटेल की मृत्यु के पश्चात् श्री पंत का झुकाव श्री टंडन की ओर अधिक हो रहा है तथा एक दिन वे पूर्ण रूप से उनके समर्थक हो जायेंगे; उनकी दृष्टि में अपनी प्रतिष्ठा बढ़ा ली। ऐसी स्थिति में श्री नेहरू को एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी जो कांग्रेसी नेताओं के पारस्परिक मतभेदों को दूर कर सके। निश्चित ही वह व्यक्ति शास्त्री जी थे।

कांग्रेस के अन्य पदों के समान ही महामंत्री के पद की भी सुनिश्चित और सुस्पष्ट परिधि नहीं थी। पदस्थ व्यक्ति के साथ ही

पद के कार्य घटते-बढ़ते रहते थे। शास्त्री जी का ऐसा स्वभाव ही नहीं था कि वे स्वयं को सौंपे गये पदों का दुरुपयोग कर अनधिकृत सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करते। किन्तु १९५० में महामंत्री के कार्य बहुत व्यापक हो गये और शास्त्री जी ने इन सभी कार्यों को शान्ति, विवेक, योग्यता एवं ईमानदारीपूर्वक वहन किया। भारत में पहली बार वयस्क मताधिकार के आधार पर देशव्यापी चुनाव होने वाले थे। केन्द्र तथा प्रान्तों में कांग्रेस को इस कार्य के अनुकूल बनाना था। व्यक्तिगत एवं वर्गगत संकीर्ण संघर्षों का निराकरण करना था, जिससे योग्य उम्मीदवारों के चयन में बाधा न आये। जहां कहीं इस प्रकार के संघर्ष दूर नहीं किये जा सके, कांग्रेस हाईकमान अपने प्रतिनिधि को जो कि बहुधा शास्त्री ही हुआ करते थे, स्थिति का अध्ययन करने के लिए भेजते थे।

ऐसे अवसरों पर उन्होंने अपनी अनुपम संगठन एवं कार्य-शक्ति सिद्ध कर दिखाई। वे दिन-रात कार्य-रत रहते, उन्होंने देश भर में कांग्रेस कार्यकर्ताओं को सम्बोधित करते हुए भ्रमण किया, प्रत्येक प्रान्त की स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल चुनाव योजना बनाई, उम्मीदवारों की सूची तैयार करने में प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी की सहायता की। इस प्रकार से स्वतन्त्रता के बाद कांग्रेस में आनेवाले परिवर्तन के निकट से दर्शन किए।

चुनाव के समय शास्त्री जी को श्री नेहरू के निवास स्थान 'तीन मूर्ति भवन' में ही रहना पड़ता था। वे पूरे समय चुनाव-कार्य में इतने व्यस्त और लीन रहते थे कि तीन मूर्ति भवन के सेवक की आदत हो गई थी कि उनके कमरे में सदैव परोसी हुई थाली रखते, जिससे वे जब चाहें, भोजन कर सकें। प्रायः अगले दिन सेवक को थाली बिना छूई हुई मिलती। उन चुनावों में कांग्रेस की प्रशंसनीय

विजय का श्रेय वहुत ग्रंशों में शास्त्री जी को है।

चुनाव अभियान के सफलतापूर्वक संचालन ने शास्त्री जी को कांग्रेस की केन्द्र ग्रौर प्रान्त के संसदीय पक्ष को मार्ग दर्शन देनेवाली ग्रान्तरिक समित का ग्रनिवार्य सदस्य वना दिया। कुछ वर्षों बाद कांग्रेस संसदीय बोर्ड में उनकी स्थिति इतनी महत्वपूर्ण हो गई कि वे वोर्ड में हों या न हों, किन्तु उनके परामर्श के विना कोई निर्णय नहीं लिया जाता था।

रेल मंत्री

जव नई संसद का ग्रधिवेशन हुग्रा, तव शास्त्री जी को राज्य-सभा का चुनाव लड़ने के लिए राजी कर लिया गया तथा वे निर्वाचित भी हो गये। इसके तुरन्त बाद ही श्री नेहरू के मंत्रि-मण्डल में उन्हें रेल ग्रौर परिवहन मंत्री नियुक्त किया गया। इस प्रकार से उत्तर प्रदेश सरकार में ग्रवर संसदीय सचिव के रूप में प्रवेश लेने के लगभग १५ वर्षों में ही वे केन्द्रीय सरकार में ग्रपेक्षाकृत प्रवर सदस्य एवं देश के सबसे बड़े राजकीय उद्योग के शासकीय प्रमुख हो गये।

रेल मंत्री के रूप में शास्त्री जी ने रेल कर्मचारियों की उन्नति के लिए रेल व्यवस्था में वहुत से सुधार किये तथा विभाजन के पश्चात् इस विभाग में उत्पन्न ग्रव्यवस्था दूर कर, इसे पुनः ग्रात्मनिर्भर वनाने के यथा सम्भव प्रयत्न किये; किन्तु सवसे ग्रधिक जिस घटना ने देशवासियों का ध्यान उनकी ग्रोर ग्राकर्षित किया वह थी नवम्वर १९५६ में ग्ररियालूर रेल दुर्घटना जिसके संवैधानिक उत्तरदायित्व को स्वयं स्वीकार कर उन्होंने तत्काल रेल मंत्री पद से त्याग-पत्र दे दिया।

भारतीय रेलवे के इतिहास में उनका त्याग-पत्र ग्रद्वितीय है जो

सदैव उस व्यक्ति के चरित्र और सत्य निष्ठा की गाथा कहता रहेगा।

प्रमुख चुनाव संयोजक

रेल दुर्घटना के बाद उन्होंने रेल मंत्री के उत्तरदायित्व से मुक्ति प्राप्त कर चुनाव संचालन का भार ग्रहण किया। द्वितीय आम चुनाव के लिए कांग्रेस का संगठन करते हुए उन्हें जो असाधारण अनुभव व विशेषाधिकार प्राप्त हुए वे आने वाले वर्षों में उनके लिए उपयोगी सिद्ध हुए।

यहां यह स्वीकार करना ही होगा कि यदि उन्हें ये कर्तव्य नहीं सौंपे जाते तो उस समय जबकि कांग्रेस से महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे थे, शास्त्री जी का देश के उदीयमान व्यक्तित्वों से घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित होना सम्भव नहीं था।

प्रधानमंत्री के समर्थन से उन्होंने जो भी भूमिका अदा की उसने इन चुनावों में कांग्रेसी प्रत्याशियों के चुनाव में उनके सुझाव को बहुत महत्व दे दिया। अतः वे ऐसे व्यक्ति हो गये जिसे कांग्रेस के खेमे के प्रतिद्वन्द्वी दल अपने गुणों से प्रभावित करने का प्रयत्न करते थे।

पंडित पंत पर उत्तर प्रदेश के लिए द्वितीय आम चुनाव के उम्मीदवारों का निर्णय करने का भार था। यह विडम्बना ही थी कि उत्तर प्रदेश में कांग्रेस को १०० से अधिक स्थान खोने पड़े। दूसरी ओर शास्त्री जी का उम्मीदवारों का चयन इतना उपयुक्त था कि उन्होंने जिन व्यक्तियों की सिफारिश की थी उनमें से अधिकांश विजयी हुए। उन्होंने उम्मीदवारों का चयन बिना किसी वर्ग भेद के किया।

१९६२ में पुनः चुनाव अभियान के लिए उन्हें ही नियुक्त किया गया। वे श्री नेहरू तथा इन्दिरा जी कांग्रेस उम्मीदवारों की अन्तिम सूची तय करने वाली वास्तविक 'डी-फैक्टो' समिति में थे। उस

चुनाव में कांग्रेस में एक तिहाई स्थान युवा वर्ग के लिए सुरक्षित रखने का श्रेय शास्त्री जी को ही है।

पुनः मंत्रिमण्डल में

द्वितीय ग्राम चुनाव में शास्त्री जी इलाहाबाद से लोकसभा के लिए निर्वाचित हुए तथा मार्च १९५८ तक परिवहन या यातायात मंत्री के रूप में कार्य करते रहे। उसी माह में जब राज्य जीवन बीमा निगम से सम्बन्धित एक काण्ड के सिलसिले में वित्तमंत्री श्री टी० टी० कृष्णमाचारी के त्याग-पत्र देने से केबिनेट में उलट-फेर हुआ, तब श्री शास्त्री ने वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय का कार्यभार सम्भाला। वाणिज्य और उद्योग मंत्री के रूप में उनके कार्य के बारे में मतभेद है। उनके कार्यों का विवरण अद्वितीय तो नहीं कहा जा सकता, फिर भी अधिकांश व्यापारी वर्ग का विचार था कि वे पर्याप्त कार्य-कुशल एवं परिश्रमी थे। उनकी ईमानदारी पर कभी उंगली नहीं उठाई जा सकी। पंडित पंत के अस्वस्थ रहने के कारण फरवरी १९६१ में शास्त्री जी कार्यकारी गृहमंत्री नियुक्त हुए। ७ मार्च को उस वृद्ध नर केसरी ने अन्तिम सांस ली और केन्द्रीय गृहमंत्री की भयावह शक्तियों एवं विशेषाधिकारों के उत्तराधिकारी उनके भूतपूर्व शिष्य हुए। १९६१ से १९६३ तक गृहमंत्री के रूप में कार्य करते हुए भारतीय राजनीति को उदार बनाने की उनकी योग्यता पराकाष्ठा पर पहुंच गई।

मंत्री पद से त्याग

१० अगस्त १९६३ को दिल्ली में कांग्रेस-कार्यकारी समिति ने मद्रास के मुख्यमंत्री श्री के० कामराज द्वारा प्रस्तुत यह प्रस्ताव

सर्वानुमति से स्वीकृत किया कि कांग्रेस के प्रमुख व्यक्ति स्वेच्छा से अपने मंत्री पद त्याग दें एवं पूर्ण रूप से संगठन कार्य में जुट जाएं। केन्द्रीय मंत्री मण्डल में अपने पांच साथियों सहित शास्त्री जी ने अपना त्याग-पत्र प्रधानमंत्री को दे दिया, जो २४ अगस्त को स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार 'कामराज योजना' के अन्तर्गत त्याग-पत्र देने के पश्चात् भी वे अपना सम्मान यथावत् बनाये रहे।

गृह मंत्रालय से उनके प्रस्थान के समय किसी ने यह कल्पना भी नहीं की थी कि एक दिन वे भारत के प्रधानमंत्री के रूप में श्री नेहरू का स्थान लेंगे, किन्तु जब भुवनेश्वर में श्री नेहरू की अस्वस्थता के कारण उनकी सहायता के लिए वापस बुलाया गया, तो राजनैतिक क्षेत्रों में यह सम्भावना व्यक्त की जाने लगी कि भावी प्रधानमंत्रित्व के लिए सर्वाधिक उपयुक्त पात्र शास्त्री जी ही हैं जिस तेजी से यह सम्भावना विश्वास में परिणत हो गई वह इस सामान्य धारणा का प्रमाण थी कि वे श्री नेहरू द्वारा प्रस्थापित परम्पराओं का उल्लंघन नहीं करेंगे। उनके आगमन को नेहरू युग का ही कुछ परिवर्तित रूप मान लिया गया। नेपाल से भारत के सम्बन्धों को सुधारने का कार्य हाथ में लेते ही उन्होंने अत्यन्त कुशलतापूर्वक एवं तीव्रगति से सब उलझनें सुलझा दीं; काश्मीर के मामलों में हस्तक्षेप के समय उन्होंने अपनी राजनीतिक निर्भीकता एवं कार्यक्षमता का परिचय दिया।

शास्त्री जी के सम्बन्ध में एक बात विश्वास के साथ कही जा सकती है कि उनका निजी शत्रु कोई नहीं था। वे द्वेष और दुर्भावना से परे थे। उनका मनोहर एवं भोला-सा चेहरा, कोमल स्वर, सौम्य स्वभाव तथा उनकी निष्कपट सत्यनिष्ठा ने उनके राजनैतिक व्यक्तित्व को मध्यस्थ एवं सेतुबन्ध के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। वे बिना क्रोधित हुए दृढ़ता का परिचय दे सकते थे। समय-समय पर अपना

कर्तव्य समझकर उन्होंने श्री नेहरू को अरुचिकर सलाह भी दी। शेख अब्दुल्ला को रिहा करने का निर्णय लेने के पीछे उन्हीं का हाथ था।

प्रधान मंत्री

२७ मई, १९६४ को श्री जवाहरलाल नेहरू के निधन के पश्चात् कांग्रेस संसदीय दल ने शास्त्री जी को निर्विरोध अपना नेता चुना। सौभाग्य से कांग्रेस ने विवेकपूर्ण निर्वाचन किया; क्योंकि वे गांधीवादी मध्यम मार्गी के रूप में कांग्रेस के वाम और दक्षिणपंथी दोनों वर्गों को ही स्वीकार्य थे। कांग्रेस की एकता के लिए दोनों वर्गों ने अपने मतभेद भुलाकर शास्त्री जी को अपना नेता स्वीकार कर लिया।

सिद्धान्तवादी

शास्त्री जी ने सार्वजनिक जीवन में अपने कुछ सिद्धान्त बना लिए थे और हर कीमत पर उन्हें निवाहते थे। सन् १९३६ में वह इलाहाबाद म्युनिसिपल बोर्ड के सदस्य चुने गए और बोर्ड के प्रतिनिधि की हैसियत से इलाहाबाद इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट के ट्रस्टी भी चुने गये। ट्रस्ट ने टैगोर टाउन की नई विकास योजना में भूमि का विकास कर कई आधे एकड़ के प्लाट बनाए थे। उन प्लाटों को नीलाम पर बेचने का सिद्धान्त तय किया गया। शास्त्री जी के एक हितेच्छु मित्र ने, जो इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट के भी ट्रस्टी थे; कमिश्नर से अनुमति ले ली कि अपनी और शास्त्री की ओर से वह प्लाटों के नीलाम में बोली बोल सकें। बिना कमिश्नर की अनुमति ट्रस्ट का सदस्य नीलाम में भाग नहीं ले सकता था। शास्त्री जी नगर से बाहर थे। उनकी गैर हाजिरी में मित्र ने दोनों प्लाट नीलाम में खरीद लिए और दोनों की

ओर से रुपया जमा कर दिया। शास्त्री जी जब लौटकर आए तब बड़े दुःखी हुए। उन्होंने न केवल अपने प्लाट की बिक्री रद्द कराई बल्कि मित्र को भी विवश किया कि वह अपना प्लाट भी वापिस कर दें। शास्त्री जी ने ट्रस्ट की मीटिंग में स्पष्टीकरण करते हुए कहा—

"सार्वजनिक कार्यकर्ता की हैसियत से हमें परिग्रह नहीं होना चाहिए। सामान्य कार्यकर्ता जायदाद खड़ी करे यह उसकी मिशनरी भावना के साथ मेल नहीं खाता। दूसरी बात, ट्रस्ट के ट्रस्टी की हैसियत से लाभ उठाना मैं अनैतिक मानता हूं, फिर चाहे वह प्लाट खुले नीलाम में ही क्यों न खरीदा गया हो।" शास्त्री जी ने मीटिंग को यह भी सूचित किया कि उन्होंने अपरिग्रहि भावना स्वीकार कर गांधी जी को वचन दिया है कि वह गृह और सम्पत्ति अर्जित नहीं करेंगे और ईश्वर पर अपनी दृढ़ आस्था प्रकट करने के लिए जीवन-बीमा भी नहीं करायेंगे।

इस देश में अगणित अनाथ परिवार हैं। उनका परिवार भी, उनके सिद्धान्तों के फलस्वरूप यदि उनकी मृत्यु के पश्चात् अनाथ परिवारों की गणना में आ जाए तो इससे उनकी आत्मा को कष्ट नहीं होगा।

वह दिन था और आज! शास्त्री जी अपने वचन पर दृढ़ रहे और सचमुच अपने परिवार को गृहविहीन और सम्पत्तिविहीन स्थिति में छोड़ कर विदा हुए।

देश की बागडोर

जिस समय श्री लालबहादुर शास्त्री ने राष्ट्र के शासन की बागडोर सम्भाली, उस समय अनेक प्रकार के संकटों के काले बादल राष्ट्राकाश पर मंडरा रहे थे। छोटे से कद और सीधे-सादे लिबास

में एक सरल, सौम्य स्वभाव के इस व्यक्ति के बारे में लोगों के मन में अनेक प्रकार की शंकाएं उभर आई थीं। किन्तु श्री लालबहादुर जी के छोटे शरीर के भीतर कितना शक्तिशाली हृदय छुपा हुआ था इसका आभास ३ जून, १९६४ को ही मिल गया जब नव-निर्वाचित प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने पहली बार पत्र-प्रतिनिधियों से भेंट करते हुए दृढ़ता से सिंह घोषणा की—

"मेरे छोटे से कंधों पर देश की सेवा का जो महान् उत्तरदायित्व आया है, उसे मैं हर तरह से पूरा करने की चेष्टा करूंगा। मैं सबसे अधिक ध्यान बढ़ते हुए मूल्यों को रोकने और देश की बेकारी तथा गरीबी को दूर करने पर दूंगा। लेकिन साथ ही साथ मैं रक्षा की तैयारी में भी किसी प्रकार की ढील नहीं आने दूंगा। मैं देश की एकता को मजबूत बनाने के लिए सब सम्भव उपाय काम में लाऊंगा।"

इनका यही संकल्प दो दिन बाद संसदीय कांग्रेस दल की बैठक में और भी मुखरित होकर सामने आया।

धीरे-धीरे इस छोटे से, सीधे-सादे दिखने वाले व्यक्ति का प्रभाव दिखने लगा। पहले तो भ्रष्टाचार की समस्या उठायी और कैरों तथा बख्शी एवं पटनायक जैसे अत्यन्त प्रतापशाली मंत्रियों के त्याग-पत्र उन्होंने स्वीकार कर लिए। इससे एक बात स्पष्ट हो गई कि देश के सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार नहीं चल सकेगा। इसके लिए उपयुक्त वातावरण देश में बना।

फिर आर्थिक नीति के सम्बन्ध में शास्त्री जी ने ठोस, व्यावहारिक एवं सूझबूझ की नीति अपनाई गई। प्रधानमंत्री सचिवालय से यह आदेश प्रसारित हुए कि—"लम्बी-लम्बी योजनाएं बनाने की अपेक्षा एक-दो वर्षों में फल देनेवाली योजनाओं पर विचार किया जाए।"

इससे लोगों का उन पर विश्वास जमा।

समाजवाद के व्यावहारिक पक्ष को समक्ष रखकर शास्त्री जी ने उस पर अमल करने पर अधिक बल दिया और कांग्रेस के दिग्गज नेताओं ने जब देखा कि शास्त्री जी की धीरे-धीरे छाप दृढ़ता के साथ पड़ती जा रही है तो मोरारजी जैसे नेता भी बंगलौर अधिवेशन में चुप बैठ गए और सामान्य व्यक्तियों ने, तटस्थ निरीक्षकों ने भी चैन की सांस ली।

महाराष्ट्र-मैसूर सीमा-विवाद और गोवा-द्वीप-दमन के प्रश्न कई वर्षों से उलझे हुए थे। केन्द्र सरकार कोई ठोस निर्णय नहीं ले पा रही थी। शास्त्री सरकार ने उनका निबटारा करने की कुशलता दिखलाई और शास्त्री जी ने अपने निर्णय से स्पष्ट कर दिया कि उनमें प्रशासन के आवश्यक गुण हैं। सभी लोग उनके स्पष्ट निर्णय से चकित रह गए और उनके प्रति आस्था स्वत: बनती गई।

अन्त में पाकिस्तान के साथ हुए युद्ध के समय उन्होंने अपने नेतृत्व की महानता के जो दर्शन कराए, उसका इतिहास सदा अमर रहेगा। उनकी उस समय की सूझबूझ, दृढ़ निश्चय, स्पष्ट आदेश ने पाकिस्तान को, विश्व के सभी राजनीतिज्ञों को और स्वयं भारतवासियों के सामने यह स्पष्ट कर दिया कि भारतीय नेतृत्व कमजोर और डरपोक नहीं है और वह शांति प्रेमी होते हुए भी अहिंसा की अव्यावहारिक कल्पना का दास नहीं है।

राष्ट्र के नाम प्रथम सन्देश

बहिनो और भाइयो !

प्रधानमंत्रित्व का गुरुत्तर भार, उसके कार्यों तथा जिम्मेदारियों को मैंने विनम्रता और देशवासियों के प्रति अपने प्रेम और श्रद्धा की

भावना से ही अपने कंधों पर लिया है। प्रशासकीय सुधारों की

समस्याओं की ओर हमारा ध्यान रहे इसका हम पूरा प्रयास करेंगे। आर्थिक परिवर्तन के लिए प्रभावकारी साधन बनाने के निमित्त प्रशासकीय संगठन, इसकी प्रणालियों और प्रक्रियाओं का आधुनिकीकरण आवश्यक है।

लोगों को अनुशासन के साथ संयुक्तरूप में काम करना चाहिए और राजनीतिक दलों के सदस्यों को चाहिए कि वे राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्य में सहायता का हाथ बटायें। चाहे देश के किसी भाग के लोगों को, किसी प्रश्न पर कोई भी भावना कैसी भी मजबूत क्यों न हो, उन्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि प्रथमतः वे भारतीय हैं और एक राष्ट्र तथा एक देश अपरिवर्तनीय ढांचे के भीतर सभी मतभेदों को सुलझा दें।

राष्ट्रपति अयूब खां के हाल के रेडियो वक्तव्य में विवेक और समझदारी दिखाई गयी है और उनका वक्तव्य मौजूं मौके पर दिया गया है। चाहे जो हो भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बन्ध की सम्प्रति जैसी स्थिति है उसमें इसके लिए दोनों देशों की सरकारों और जनता के संकल्प और सद्भावना की आवश्यकता है।

भारत की तटस्थता की नीति बनी रहेगी और दूसरे देशों के साथ अपने सम्बन्ध और विश्व-समस्याओं के प्रति हमारे रुख का यह नीति-मौलिक आधार भी बनी रहेगी। अफ्रीकी-एशियाई गुट के हम नेता बनना नहीं चाहते। विश्व शांति और जनता की स्वतन्त्रता के प्रश्न पर अपने अफ्रीकी और एशियाई मित्र-राष्ट्रों का एक सहयोगी बने रहने में ही हमें सन्तोष है।

भारत ने कोलम्बो प्रस्तावों को मान लिया है और अब यह चीन के ऊपर है कि वह उन्हें माने और अपने रुख पर फिर से विचार

करे और साथ ही चीन में तथा हमारे अफ्रीकी-एशियाई राष्ट्रों में भारत-विरोधी प्रचार वह बन्द करे।

भारत को स्वतन्त्र, सबल और समृद्ध बनाने तथा युद्ध-विहीन शांतिपूर्ण विश्व के निर्माण-कार्य को पूरा करने से बढ़कर महात्मा गांधी तथा जवाहरलाल जी की कोई और स्मृति नहीं हो सकती।

हम सभी नेता कभी-कभी, असफल सिद्ध होते हैं, किन्तु जनता असफल सिद्ध नहीं ठहरती, अभी हाल में जनता ने और उनके प्रतिनिधियों ने अपनी यह प्रबल इच्छा व्यक्त की कि प्रधानमंत्री पद के लिए संघर्ष नहीं होना चाहिए, यह अच्छी परम्परा है।

मैं शीघ्र ही मूल्य वृद्धि को रोकने के लिए आवश्यक उपायों पर विचार-विमर्श करूंगा। देश की अन्य समस्याओं के निराकरण के लिए हमें अधिक परिश्रम भी करने होंगे।

देश के विकास के लिए सभी व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त हो इसकी मैं पूरी कोशिश करूंगा।*

—जयहिन्द

युद्ध-विराम

भारत में युद्ध बन्दी के लिए सुरक्षा परिषद् की अपील मंजूर कर ली गई और इसकी विधिवत् घोषणा २३ सितम्बर को की गई।

---

* प्रधानमंत्री का पद ग्रहण करने के बाद पहली बार अपने राष्ट्र-व्यापी ब्रॉडकास्ट में श्री लालबहादुर शास्त्री जी ने राष्ट्र के नाम सन्देश ११ जून, १९६४ की रात्रि को आकाशवाणी, नई दिल्ली से प्रथम हिन्दी में और इसके तुरन्त बाद अंग्रेजी में प्रसारित किया।

इस अवसर पर अपने विचार व्यक्त करते हुए भारत के प्रधानमंत्री ने कहा—

"दुश्मन बेईमान और अविश्वनीय है। सम्भव है कि खुल्लम-खुल्ला या चोरी-छिपे फिर से धोखे या छल-कपट से कोई और चाल चलने की तैयारी कर रहा हो।

इसलिए किसी प्रकार की असावधानी बरतना या सुरक्षा प्रबन्धों में ढील देने की कोई गुंजाइश नहीं। अपनी अखण्डता को बनाए रखने के लिए हमें सदा ही चौकसी की आवश्यकता है।"

संसद में भाषण

बड़ी ताकतें भारतीय जनता की भावनाओं को समझ लें कि देश की स्वच्छन्दता और अखंडता को हर प्रकार से बनाए रक्खा जायेगा। मुझे यह बात बिलकुल समझ नहीं आई कि बड़ी ताकतें आखिर हम से क्या चाहती हैं। क्योंकि हमारा मुल्क एक बड़ा मुल्क है, क्या इस-लिए जब भी हमारे ऊपर दबाव डाला जाए तो हमें अपने इलाके के किसी हिस्से को छोड़ देना चाहिए? बड़ी ताकतों को यह महसूस करना चाहिए कि यदि उन्होंने ऐसा ही रवैया अपनाए रक्खा तो वे हमें एक कठिन परिस्थिति में डाल देंगी। हमने यह दिखा दिया है कि देश की अखण्डता के लिए हम खून की आखिरी बूंद भी बहाने को तैयार हैं। मैं तमाम बड़ी ताकतों से अपील करूंगा कि वे हमारी भावनाओं को समझने की कोशिश करें।

आपने कहा कि भारत और पाकिस्तान के हाल ही के युद्ध विराम से एक नई स्थिति उत्पन्न हो गई है। सुरक्षा परिषद् ने प्रस्ताव पास किया और भारत ने युद्ध विराम कर लिया। पाकिस्तान पर भी युद्ध विराम स्वीकार करने पर जोर डाला गया। लेकिन

इसने युद्ध विराम के साथ इसे स्वीकार किया। पाकिस्तान के विदेश-मंत्री जिस प्रकार के भाषण दे रहे हैं, उससे तो यह पता चलता है कि वे युद्ध विराम ज्यादा देर तक जारी रखना नहीं चाहते। श्री भुट्टो ने यह धमकी दी है कि यदि काश्मीर की समस्या उसकी मर्जी के अनुसार हल नहीं की जाती तो वे संयुक्तराष्ट्र से अलग हो जाएंगे और साथ में यह भी कहा कि तब तक पाकिस्तान किसी भी भाग से सेनाएं नहीं हटाएगा। लेकिन मिस्टर भुट्टो को यह समझ लेना चाहिए कि हम इस किस्म की धमकियों से डरने वाले नहीं हैं।

भारत सरकार सुरक्षा परिषद् द्वारा किये गए उपायों से सम्बन्ध कई महत्त्वपूर्ण समस्याओं के बारे में बिलकुल स्पष्ट है। पहली बात यह कही जाती है कि सेना को ५ अगस्त वाली जगह पर हटाया जाए और दूसरी यह कि काश्मीर की समस्या का राजनीतिक हल ढूंढ़ा जाए। मैंने इन दोनों मामलों से अपनी सरकार को परिचित करवा दिया है। जहां तक सेनाएं न हटाने के सम्बन्ध में पाकिस्तान की धमकी का प्रश्न है हम ऐसी शर्त मंजूर नहीं करेंगे। यदि पाकिस्तान ने सेनाएं हटाने से इन्कार कर दिया तो हमारे लिए भी एकतरफा तौर पर सेनाएं हटाना असम्भव है।

हाल ही में भारतीय सेनाओं की सफलता ने लोगों में एक नया विश्वास पैदा कर दिया है। लोगों में कुछ निराशा का भाव आ गया था कि हमारी कौम एक कमजोर कौम है जो किसी भी आक्रमण से अपनी रक्षा नहीं कर सकती। हमारे हौंसले पाकिस्तान के सख्त मुकाबले के बावजूद भी बुलंद होने चाहिए। पाकिस्तानी तोपखाने को तबाह करने में हमारी सेनाओं को विशेष सफलता हुई है।

यद्यपि मैं शान्तिप्रिय हूं और जहां तक मुमकिन हो व्यक्तिगत रूप से किसी को नुकसान पहुंचाना मैं ठीक नहीं समझता लेकिन प्रधान-

मन्त्री के रूप में मुझे अपनी जिम्मेदारी संभालनी थी। इसलिए देश की मान-मर्यादा की रक्षा करके अपने कर्त्तव्य को निभाया। कच्छ में जो कुछ भी हुआ उससे मुझे बहुत दुःख हुआ। उस समय मुझे महसूस हुआ कि कोई बड़ी लड़ाई नहीं होनी चाहिए। इसलिए मैंने कच्छ के बारे में जो फैसला किया वह बहुत ठीक था। यह बात कितनी खेद-जनक है कि जब कच्छ-समझौता हो रहा था, पाकिस्तान काश्मीर में नए हमले की तैयारियां कर रहा था। पाकिस्तान के काश्मीर पर हमला करने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुंचा कि ज्यादा बातचीत नहीं होगी और ताकत का जवाब ताकत से दिया जायगा। पाकिस्तान बाद में भारी सेना लेकर छम्ब सैक्टर में आया, जिसके बाद हम पश्चिमी पाकिस्तान में दाखिल होने पर मजबूर हो गये।

पाकिस्तान को करारा उत्तर

२७ सितम्बर, १९६५ को राजधानी के रामलीला मैदान में पाकिस्तान तथा ब्रिटेन को ललकारते हुए उन्होंने जो ओजस्वी भाषण दिया वह भारत के इतिहास में अमर रहेगा। उन्होंने कहा—अयूब साहब कहते रहे हैं—हमारा क्या, हम तो अपने टैंकों को लेकर आगे बढ़ेंगे और टहलते हुए दिल्ली पहुंच जाएंगे, तो इस तरह टहलते-टहलते दिल्ली में आने का उनका इरादा था। जब उनका यह इरादा था तब अगर हम भी थोड़ा लाहौर की तरफ टहलकर चले गए तो मैं समझता हूं कि मैंने या हम लोगों ने कोई गलत बात नहीं की। हमारे लिए चारा ही क्या है और चारा ही क्या था, ब्रिटिश सरकार ने हमें कसूरवार बताया और कहा कि हिन्दुस्तान ने पाकिस्तान पर हमला किया है। जब हजारों हमलावर कश्मीर के अन्दर घुसे तब ब्रिटिश गवर्नमेण्ट की जुबान बिलकुल बन्द रही। इसी तरह जब

पाकिस्तान ने छम्ब पर हमला किया, इण्टर नेशनल सरहद को पा
किया और इतने बड़े टैंकों और फौजों के साथ धावा बोला, तब
ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के प्राइम मिनिस्टर ने यह नहीं कहा कि पाकिस्ता
ने हिन्दुस्तान पर हमला किया है ।

हमने देखा कि पाकिस्तान इतनी तेजी से बढ़ रहा है कि अगर ह
सिर्फ अपनी रक्षा और हिफाजत की बात करते रहे तो फिर हमा
वह हालत नहीं रहेगी कि हम पाकिस्तान को बढ़ते हुए रोक सकें
अपने मुल्क की आबादी को खतरे में डालने का काम न हम कर सक
हैं, न दुनिया की कोई सरकार कर सकती है । हमारा इरादा था औ
पक्का इरादा है कि हम शान्ति को मानें । अगर हम दुश्मन का मुक
बला शान्ति के साथ कर सकते हैं तो करने को तैयार हैं, लेकि
इसमें कायरता और बुजदिली के लिए जगह नहीं हो सकती । हथिया
का जवाब हथियार हैं, इसलिए आपको उस काम की जरूरत थी
हमारी फौजों ने किया । राज की बात बतानी तो नहीं चाहिए, लेकि
जब हमारे जनरल मेरे पास आए और उन्होंने इसके बारे में पूछा
मैं क्या जवाब दे सकता था । मैंने कहा—बहादुरो, बढ़ते जाओ औ
कोई बात सोचने की नहीं ।

"इस तरह हम बढ़ते गए, चाहे सियालकोट हो, चाहे कसूर
चाहे लाहौर हो और चाहे कोई और जगह । हमने अनेक जगहों
अपनी फौजें पहुंचाई हैं और वे फौजें वहां हैं । अगर आज दुनिया
और सिक्योरिटी काउंसिल ने शान्ति की आवाज उठाई है, सुलह
बात कही है, लड़ाई रोकने की बात कही है । लड़ाई रोकने की ब
कही है तो हमें इसमें एतराज नहीं । जहां तक हो सके, हम न
चाहते कि यह लड़ाई बड़ी लड़ाई बने और सारी दुनिया इस लड़
के अन्दर आ जाए । हम दुनिया को लड़ाइयों से बचाते रहे हैं । हम

नेता जवाहरलाल नेहरू जी ने अपने जीवन काल में दुनिया में शान्ति वनाकर रखने की पूरी कोशिश की और कई कमाल के ऐसे काम किए जिनसे दुनिया में आग लगते-लगते वची। आज भी हम उन सिद्धांतों, उन वातों को भूल नहीं सकते। हम तो अपने देश में शान्ति और धीरज से रहना चाहते हैं। हम अपने मुल्क की हालत को वदलना चाहते हैं। यहां की गरीवी को मिटाना चाहते हैं, एक नया समाज वनाना चाहते हैं। हमें न किसी की जमीन चाहिए, न किसी का इलाका चाहिए, हम अपने देश में खुश हैं और हम जरा भी नहीं चाहते कि हमारी वजह से दुनिया मे कोई महासमर हो या कोई बड़ी लड़ाई हो। इसलिए जव सुलह की वात कही गई और लड़ाई को वन्द करने की वात कही गई तव हमने उसे मांना, फौरन माना।"

"लड़ाई-वन्दी तो हुई, लेकिन पाकिस्तान की तरफ से आखिरी दिन भी और लड़ाई-वन्दी के एक दिन वाद भी कुछ न कुछ हमला, कुछ न कुछ गोलावारी हुई। जिन इलाकों में हम थे, लाहौर के पास या कसूर के पास, उन्हीं ने अपने हथियारों के साथ आने की कोशिश की। यह कहां तक मुनासिव था, इसका फैसला यूनाइटेड नेशन्स या सिक्योरिटी काउंसिल करे।"

"कहा गया है कि हमने हमला किया, हमारी फौंजों ने इस लड़ाई के वन्द होने के वाद कहीं भी उनके इलाके में, किसी भी नई जगह कोई हमला किया हो, यह वात विलकुल गलत है। मगर जव वे हमला करते हैं तो हमें उसका जवाव तो देना ही है, यानि उसको रोकना है। मगर यह क्या है कि पाकिस्तान तो धमकी देता चले, भुट्टो साहव रोज धमकी की तकरीरें करते जाएं और सिक्योरिटी काउंसिल और बड़े-बड़े मुल्क उनसे दवते चले जाएं। आखिर हम इस दवने को कैसे वर्दाश्त कर सकते हैं और कव तक वर्दाश्त करेंगे?

अगर भुट्टो साहब यह चाहते हैं कि पहले कश्मीर का इस तरह फैसल
नहीं हो सकता अगर वह अपनी फौजें हटाने को तैयार नहीं तो ह
भी वहीं बैठेंगे और बैठे रहेंगे जहां आज हैं। हम उनसे बहुत आ
हैं और बहुत जगहों पर हैं, पाकिस्तान में। इसलिए हमें कोई ब
चिन्ता नहीं है। अगर वे बैठे रहना चाहते हैं तो हम भी बैठे रहेंगे।

"कश्मीर के मसले पर आज कुछ कहने या दुहराने की जरू
नहीं। वह चाहते हैं कि हम हाजीपीर से हट जाएं, कारगिल से ह
जाएं। अरे साहब, आप तो हमारे सारे आजाद कश्मीर पर कब्
किए बैठे हैं, क्या पाकिस्तान का हिस्सा है? गैर-कानूनी तरीके प
आपने उसे दबा रखा है। सिक्योरिटी काउंसिल के पुराने प्रस्ताव
देखिए जम्मू कश्मीर का, जिसमें आजाद कश्मीर शामिल है, उस
सारा इन्तजाम, उसका सारा एडमिनिस्ट्रेशन काउंसिल गवर्नमेंट
अण्डर होना चाहिए। यह सिक्योरिटी काउंसिल का पुराना प्रस्ता
है। तो पहले तो आप खाली कीजिए, तब हमसे कहिये ठीथवाल औ
कारगिल के बारे में। हम तो चन्द कदम आगे गए हैं, बहुत ज्या
तो नहीं—खैर, कदम नहीं मीलों आगे गए हैं। मगर इस तरह
कश्मीर की बात को डर और धमकी से कराने की या चलाने
कोशिश करना कोई मानी नहीं रखता। हमारी जगह पक्की है
कश्मीर के बारे में। कश्मीर हिन्दुस्तान का अटूट हिस्सा है और व
टूट नहीं सकता, यह बात सबको समझ लेनी है। ठीक है हिन्दुस्ता
और पाकिस्तान के सम्बन्ध को अच्छा बनाने के लिए कोई कोशि
करता है, तो जरूर करे, उसमें हमें एतराज नहीं है। आखिर ह
पड़ोसी मुल्क बनकर रहना है और आपस में खिचाव, मनमुटा
दुश्मनी के जज्बे से रहना पड़ोसी मुल्कों के अन्दर बड़ी मुसीबतें औ
दिक्कतें पैदा करता है। वह बात एक अलग बात है। लेकिन अग

कश्मीर को बुनियाद बनाकर कोई [illegible] की शक्ल बदलने की कोशिश करे, तो हमारे लिए उसको मानना नामुमकिन है और हम अपनी जगह से नहीं हट सकते।"

"देश की सैनिक नीति को इस तरह स्पष्ट करने के बाद शास्त्री जी ने अन्न-संकट की चर्चा की और देशवासियों से निरन्तर सतर्क रहने की अपील की। उन्होंने कहा—"मैं आपसे एक और निवेदन करना चाहता हूं। हम नहीं जानते कि यह लड़ाई कब क्या शक्ल अख्तियार कर ले। ऊपर से चीन की भी धमकी हम पर लगी हुई है। एक भयानक स्थिति का हमें सामना करना है। इससे घबराने की कोई बात नहीं है मगर आप सोचें कि आज मुल्क में कितने डिसिप्लिन की जरूरत है, कितने अनुशासन की जरूरत है, कितनी तकलीफें उठाने के लिए तैयार रहना है, कितना त्याग करने के लिए कमर कसनी है ये बातें हमको आज अपने मनों में रखनी है, उसके मुताबिक काम करना है। हमें अपने और काम रोकने पड़ सकते हैं, लेकिन अपनी फौजी ताकत को बढ़ाना, उसकी शक्ति को बराबर तरक्की देना, अपने हथियारों को ठीक रखना, उनको भी और ज्यादा बढ़ाना—ये सारी चीजें, ऐसी हैं, जिनको पहली जगह देनी पड़ेगी। हमको खाना भले न मिले, लेकिन हमें इस काम को पूरी तरह से करना है। मैं आज तो नहीं कहता, लेकिन मौका आ सकता है जब हमें खाने की मुसीबत और दिक्कत पड़े। हमारे दोस्त कुछ मुल्क हैं जो मदद करना चाहें, हम उनका स्वागत करेंगे। लेकिन ऐसा भी मौका आ सकता है जब वे मदद करना न चाहें। तब फिर हमें यहां अपने ही अन्दर कम-से-कम खाने की बात को किसी-न-किसी तरह पूरा करना ही होगा। मैं समझता हूं कि अगले दो-तीन महीनों के अन्दर हमें गांव-गांव में यह खबर पहुंचानी है कि इस समय अपने देश में

हमें अनाज पैदा करना है। मैं चाहता हूं कि आज एक-एक गांव के अन्दर ऐसा संगठन हो कि हम ज्यादा-से-ज्यादा अपनी उपज, अपनी पैदावार, अपनी खेती को तरक्की दे सकें।"

शास्त्री जी ने जरूरत से ज्यादा अनाज जमा करने की बुरी आदत की भी निन्दा की।

ताशकन्द के लिए प्रस्थान

ताशकन्द शिखर सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए ३ जनवरी, १९६६ को भारत के प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मण्डल ताशकन्द गया। उसमें श्री स्वर्णसिंह विदेश मंत्री तथा रक्षामंत्री श्री यशवन्त राव चह्वाण भी थे। इन्हें पालम हवाई अड्डे पर भाव-भीनी विदाई दी गई।

इस अवसर पर अनेकों राजनयिक, मंत्रीमण्डल के सदस्य, संसद सदस्य तथा परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त इस बार शास्त्री जी की वृद्धा मां भी उन्हें आशीर्वाद देने के लिए उपस्थित थीं।

प्रस्थान से पूर्व श्री शास्त्री जी ने पत्रकारों को बताया—'राष्ट्रपति अयूब के साथ बातचीत के परिणामस्वरूप दोनों देशों के मतभेदों और झगड़ों का कोई-न-कोई हल निकल आयेगा। हमें अच्छे परिणामों की आशा रखनी चाहिए। मेरी शक्ति की द्योतक समस्त देश की शुभ कामनायें हैं। यह कठिन परीक्षा का समय है। हमें अपने बुद्धि चातुर्य से काम लेना होगा ताकि हमारे बीच कोई स्थायी समझौता हो सके।"

हजारों लोगों का आशीर्वाद, मंगल-कामनाएं तथा शुभ सन्देश प्राप्त कर श्री शास्त्री जी ने ताशकन्द के लिए प्रस्थान किया।

ताशकन्द में भव्य स्वागत

उसी दिन अर्थात् ३ जनवरी को सायं ४ वजे ताशकन्द पहुंचे तो रूस के प्रधानमंत्री श्री कोसीगिन ने उनका भव्य स्वागत किया।

जहाज से उतरते ही उन्हें गार्ड ऑफ ऑनर दिया गया। वैंड ने भारत और रूस की राष्ट्र-गीतों की धुनें वजाईं तत्पश्चात् श्री शास्त्री जी का परिचय ताशकन्द के वरिष्ठ अधिकारियों एवं गणमान्य विदेशी पर्यवेक्षकों से करवाया गया। नन्हें-नन्हें वच्चों ने शास्त्री जी को फूलों के गुलदस्ते भेंट किए और हवाई अड्डे से उनके निवास-स्थान तक के १७ किलोमीटर रास्ते में भारत और रूस के राष्ट्रीय झण्डे लहरा रहे थे। सड़क के दोनों ओर खड़ी रूसी जनता ने उनका भव्य स्वागत किया तथा अनेक तोरण-द्वारों पर भव्य चित्र लगाकर अपनी श्रद्धा व प्रेम प्रदर्शित किया।

रूस के समाचार-पत्र प्रावदा और उज्वेकिस्तान से प्रकाशित होने वाले समाचार-पत्रों ने ताशकन्द कान्फ्रेंस के सिलसिले में अपने पत्रों के मुख-पृष्ठ पर श्री शास्त्री व श्री अयूव के वड़े-वड़े फोटो और उनका जीवन-चरित्र प्रकाशित किया।

३ जनवरी, १९६६ से १० जनवरी, १९६६ तक लगातार ८ दिन तक यह कान्फ्रेंस ताशकाद में चलती रही, जिसकी अध्यक्षता श्री कोसीगिन ने की।

३ जनवरी को पहले दिन दोनों नेताओं की अनौपचारिक वार्ता ४० मिनट तक रूस के प्रधानमंत्री की उपस्थिति में हुई इसके पश्चात् राष्ट्रपति अयूब और प्रधानमंत्री श्री शास्त्री की एकान्त में कोई डेढ़ घण्टे तक अनौपचारिक मुलाकात हुई। इसके वाद दोनों नेताओं ने कान्फ्रेंस वाले वंगले की सीढ़ियों पर खड़े होकर फोटो खिचवाई और वड़े ही सौहार्द एवं स्निग्ध वातावरण में प्रारम्भिक वातचीत कर एक-

दूसरे से सफलता की कामना की।

प्रारम्भिक भाषण

ताशकन्द सम्मेलन में ४ जनवरी, १९६६ को श्री शास्त्री जी द्वारा दिया गया सम्मेलन के समक्ष उनका ऐतिहासिक भाषण—

अध्यक्ष कोसीगिन ! आपके जिस साहसपूर्ण कदम ने मुझे और पाकिस्तान के राष्ट्रपति अयूब खां को इस ऐतिहासिक एशियाई नगर में एक स्थान पर मिलाया है, मेरी जनता, मेरी सरकार और मैं उस कदम की हृदय से सराहना करते हैं। सबसे पहले मैं उसी भावना को व्यक्त करना चाहता हूं मुझे यह कहते हुए अपार हर्ष होता है कि हमें इस नगर में जो आतिथ्य मिल रहा है, हमारी जिस तरह प्रेम-पूर्वक देखभाल की जा रही है, उसके लिए मैं और मेरा प्रतिनिधि-मंडल हृदय से आपका आभारी है। ताशकन्द की जनता ने हमारा जो भव्य स्वागत किया, वह सचमुच हमारे हृदय को छू गया।

मुझे ज्ञात है कि हमारे दोनों देशों के बीच अनेक ऐसे मतभेद हैं, जिसका हल नहीं हो सकता है। जिन देशों में बहुत अच्छे सम्बन्ध होते हैं, उनके बीच भी मतभेद और विवाद पाए जाते हैं। हमारे सामने आज प्रश्न यह है कि क्या हमें उन मतभेदों और विवादों को हल करने के लिए शक्ति के तरीके के बारे में सोचना है या हमें यह तय करके घोषणा कर देनी है कि हम शक्ति का कभी इस्तेमाल नहीं करेंगे। यदि दूसरे देश, जो बहुत साधन सम्पन्न हैं और जिनके बीच मतभेद हैं, सशस्त्र संघर्ष बचाकर शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के आधार पर साथ-साथ जीवित रह सकते हैं तो क्या भारत और पाकिस्तान जैसे देशों का जिनके सामने मुख्य समस्या अपने-अपने जनगण की आर्थिक दशा सुधारने की है, यह कर्तव्य नहीं कि वे हथियारों की

मदद से समस्याओं को हल करने का विचार [illegible] ।

'ताशकन्द सम्मेलन' के लिए आपने निमन्त्रण किया है। इस उद्देश्य की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है। शान्ति भारत और पाकिस्तान के लिए तो परम आवश्यक है ही, सारी दुनिया के लिए भी यह बहुत जरूरी है। हमें भारत-पाक सम्बन्धी एक नए अध्याय का सूत्रपात करने का प्रयत्न करना चाहिए। मैं पुरानी बातें नहीं दुहराना चाहता। मैं समझता हूं और मेरा ख्याल है कि हमारे दोनों देशों के बीच यह युद्ध बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण घटना रही। हमें इस सम्मेलन में अपने पुराने गुस्से निकालने की जरूरत नहीं बल्कि हमें भविष्य की ओर देखना है।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के प्रसंग में आक्रमण का जवाब देने के लिए ही शक्ति प्रयोग का औचित्य माना जा सकता है। इसलिए यदि हम एक-दूसरे को शक्ति का प्रयोग न करने का आश्वासन देते हैं तो इसका अर्थ यह होगा कि हम एक-दूसरे की प्रादेशिक अक्षुण्णता का सम्मान करते हैं। हमारा सदा से यह कहना है और आज भी मैं कहता हूं कि हम पाकिस्तान की प्रभुसत्ता और प्रादेशिक अक्षुण्णता को बिना किसी हिचक के स्वीकार करते हैं। इसी प्रकार हमें अपनी प्रभुसत्ता तथा प्रादेशिक अक्षुण्णता की रक्षा करनी है। शान्ति और अच्छे सम्बन्धों के लिए एक-दूसरे की प्रभुसत्ता का सम्मान करना अत्यन्त आवश्यक होता है।

यदि इस सिद्धांत को इस बार स्पष्ट रूप से स्वीकार कर लिया जाए, तो भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों के पूरे स्वरूप को दोनों देशों के जनगण के दिल में बदल दिया जा सकता है। मैं आपकी अनुमति से यहां स्पष्ट शब्दों में और पूरी सच्चाई के साथ यह कहना चाहता हूं कि हमारी कामना है कि पाकिस्तान की जनता फूले-फले। हम स्वयं

अपनी जनता के जीवन में सुधार लाने का प्रयत्न कर रहे हैं। हमारा विश्वास है कि यदि भारत और पाकिस्तान के बीच अच्छे सम्बन्ध बन जाएं तो यह उप-महाद्वीप शीघ्र ही समृद्ध हो सकता है।

जैसा कि हमने कहा, इस तरह के सम्बन्ध की आधार-शिला शान्ति-पूर्ण सह-अस्तित्त्व की नीति की स्वीकृति होनी चाहिए। इस नीति का पालन करते हुए अनेक मोर्चों पर कदम उठाने होंगे। मसलन शीत-युद्ध के वातावरण को सामाप्त करना होगा। यदि समाचार-पत्रों और रेडियो के प्रचारों द्वारा दोनों देशों के जनगण में वैर या अविश्वास की भावना भरने का क्रम जारी रहेगा, तो हम दोनों सर-कारों के प्रधान चाहे जो कुछ करें, संघर्ष का खतरा सदैव बना रहेगा। दोनों देशों के सारे सम्बन्धों में सुधार लाने को ही हमें अपना लक्ष्य बनाना चाहिए। हमारा व्यापार संकुचित होता जा रहा है। उसमें विकास होना चाहिए। भारत और पाकिस्तान से होकर अनेक नदियां बहती हैं। आज वे विवाद-स्रोत बनी हैं। होना यह चाहिए कि उनके द्वारा हमारा सहयोग और बढ़े। इससे हमारे दोनों देशों को लाभ पहुंचेगा। इसी प्रकार आर्थिक सहयोग के अनेक क्षेत्र हैं। इन्हें और समझदारी के आधार पर परस्पर हित की दिशा में आगे बढ़ाया जा सकता है।

यह सब कहते समय मेरा यह सुझाव नहीं है कि हमें दोनों देशों के बीच पाये जाने वाले अनेक मतभेदों से अपनी आंखें बन्द कर लेनी चाहिए मैं उन मतभेदों को गिनाना नहीं चाहता लेकिन मेरा यह कहना जरूर है कि इन समस्याओं को शक्ति प्रयोग से नहीं, बातचीत के द्वारा हल करना चाहिए। सशस्त्र संघर्ष-समस्याओं को हल करने की बजाय नई समस्याएं पैदा करता है इससे युद्ध और सुलह के रास्ते में रोड़े आते हैं। दूसरी ओर शान्तपूर्ण वातावरण में अपने विचारों

को हल करने की दिशा में हम सही अर्थों में प्रगति कर सकते हैं।

यदि इस सम्मेलन में, जिसे अध्यक्ष कोसीगिन ने बुलाया है, हमारे मतभेदों के हल के लिए शक्ति का प्रयोग न करने का समझौता हो जाता है तो यह सचमुच एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि होती है। इससे हमारे बीच अच्छे पड़ोसियों के सम्बन्धों का मार्ग-प्रशस्त होता है, जिसकी दोनों देशों को बड़ी आवश्यकता है और जिससे हमारी अन्य समस्याओं के हल आसान हो जाएंगे। हम अन्य प्रश्नों पर भी बात कर सकते हैं। ऐसा करना भी चाहिए, लेकिन यदि उन पर हमारा मतभेद भी हो और तुरन्त—समझने का कोई रास्ता नहीं निकल पा रहा हो तो भी हमें शान्ति का रास्ता नहीं छोड़ना चाहिए।

हमारे कंधों पर एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी है हमारे उस महाद्वीप में ६० करोड़ जनता बसती है। यह पूरी मानव-जाति का पांचवां भाग है। यदि भारत और पाकिस्तान को प्रगति करनी है, तो उन्हें शान्तिपूर्वक रहना होगा। यदि संघर्ष और बैर बना रहा, तो हमारे जनगण और बड़ी-बड़ी मुसीबतों में फंसते जाएंगे। इसके बजाए कि हम आपस में लड़ें, हमें आज गरीबी, बीमारी और युद्ध के विरुद्ध छेड़ना है। दोनों देशों के जन-साधारण की समस्याएं, आशाएं तथा सपने एक हैं। वे संघर्ष और युद्ध नहीं, शान्ति और प्रगति चाहते हैं। उन्हें अस्त्र-शस्त्र की नहीं, भोजन की आवश्यकता है, वस्त्र और घर की जरूरत है। यदि हमें अपनी जनता की इन आवश्यकताओं को पूरा करना है तो हमें इस सम्मेलन में कुछ ठोस और विशिष्ट उपलब्धि के लिए प्रयत्नशील होना होगा।

यह एक ऐतिहासिक सम्मेलन है। सारी दुनिया की निगाहें हमारे ऊपर लगी हुई हैं। हमें दुनिया को यह कहने का मौका नहीं देना है कि पाकिस्तान के राष्ट्रपति और भारत के प्रधानमंत्री ताशकंद में

मिलें तो जरूर, लेकिन कोई समझौता न कर सके। आइये, हम अपने कार्यों से दिखा दें कि हममें अपनी समस्याओं को विश्व के संदर्भ में रखकर देखने की क्षमता है।

वसीयत

ताशकन्द सम्मेलन की अन्तिम बैठक का उद्घाटन करते हुए श्री कोसीगिन ने श्री अयूब और श्री शास्त्री जी से अनुमति लेकर रूस के प्रतिनिधि मण्डल के महासचिव को ताशकंद घोषणा-पत्र पढ़कर सुनाने का आदेश दिया जो रूसी भाषा में था। इसके पश्चात् रूसी अनुवादक ने अंग्रेजी में ताशकन्द घोषणा को पढ़ा।

जो घोषणा-पत्र प्रस्तुत किया गया उसके दोनों देशों को भविष्य में शक्ति प्रयोग न करने का महत्त्वपूर्ण निर्णय किया गया था। उसको नौ सूत्रों में बांटा गया था जो निम्नलिखित हैं—

घोषणा-पत्र

भूमिका :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति, ताशकंद में मिलने और भारत तथा पाकिस्तान के वर्तमान सम्बन्धों पर विचार करने के बाद अपने इस दृढ़ संकल्प की घोषणा करते हैं कि वे दोनों देशों के बीच फिर से सामान्य और शांतिपूर्ण सम्बन्ध कायम करेंगे और दोनों देशों के लोगों में एक-दूसरे के प्रति सद्भाव और मित्रता पैदा करेंगे। वे इस उद्देश्य की पूर्ति को भारत और पाकिस्तान के ६० करोड़ लोगों के हित में अत्यंत महत्त्वपूर्ण समझते हैं।

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति इस पर सहमत हुए कि दोनों ओर से भारत और पाकिस्तान के बीच अच्छे पड़ोसियों का सम्बन्ध कायम करने के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ के घोषणा-पत्र (चार्टर) के अनुसार पूरे प्रयत्न किए जाएंगे। इस घोषणा-पत्र के अंतर्गत वे अपनी इस जिम्मेदारी को फिर से स्वीकार करते हैं कि वे ताकत से काम नहीं लेंगे और अपने विवादों को शान्तिपूर्ण तरीकों से सुलझाएंगे। वे दोनों इसे समझते हैं कि दोनों देशों के बीच तनाव, उनके क्षेत्र, विशेषकर भारत-पाकिस्तान भूखंड की शांति और वस्तुतः भारत और पाकिस्तान के लोगों के हित में बाधक है। इसी पृष्ठभूमि में जम्मू-कश्मीर के बारे में विचार हुआ और दोनों पक्षों ने अपनी-अपनी स्थिति को स्पष्ट किया।

: दो :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति इस पर राजी हुए हैं कि दोनों देशों के सब सशस्त्र आदमी २५ फरवरी, १९६६ तक उन ठिकानों पर वापस लौट जाएंगे, जहां वे ५ अगस्त, १९६५ के पहले थे और दोनों पक्ष युद्ध-विराम रेखा पर, युद्ध-विराम की शर्तों का पालन करेंगे।

: तीन :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति इस पर सहमत हैं कि भारत और पाकिस्तान के सम्बन्धों का आधार इस सिद्धांत पर होगा कि एक-दूसरे के भीतरी मामलों में दखल नहीं दिया जाएगा।

: चार :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति इस पर सहमत हुए हैं कि दोनों देशों में एक-दूसरे के विरुद्ध प्रचार को रोका जाएगा और ऐसे प्रचार को बढ़ावा दिया जाएगा, जिससे दोनों देशों में मित्रता का संबंध बढ़े।

: पांच :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हुए कि पाकिस्तान में भारत के उच्चायुक्त और भारत में पाकिस्तान के उच्चायुक्त अपनी-अपनी जगह लौट जाएंगे और दोनों देशों में सामान्य राजनयिक सम्बन्ध फिर से कायम किये जाएंगे। दोनों सरकारें अपने राजनयिक व्यवहार में, १९६१ के वियना समझौते का पालन करेंगी।

: छ :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हुए कि वे भारत और पाकिस्तान के बीच, आर्थिक सम्बन्ध, व्यापार, संचार और सांस्कृतिक सम्पर्क को फिर से कायम करने की कार्रवाई पर विचार करेंगे और भारत तथा पाकिस्तान के वर्तमान समझौतों को अमल में लाएंगे।

: सात :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हुए कि वे अपने अधिकारियों को युद्धबन्दियों की वापसी का आदेश देंगे।

: आठ :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हुए कि दोनों पक्ष, शरणार्थियों की, निष्कासितों की, गैरकानूनी बसनेवालों की समस्याओं से सम्बन्धित प्रश्नों पर बातचीत जारी रखेंगे। वे इस बात पर भी सहमत हुए कि दोनों पक्ष ऐसे हालात पैदा करेंगे, जिससे लोगों का देश से भागना बन्द हो। वे इस बात पर भी सहमत हुए कि संघर्ष के दौरान दोनों पक्षों ने जिस माल व सम्पत्ति पर अधिकार कर लिया है, उसके लौटाने के बारे में बातचीत की जाएगी।

: नौ :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति सहमत हुए कि जिन मामलों का दोनों देशों से सीधा सम्बन्ध है, उन पर विचार के लिए, दोनों पक्षों की सर्वोच्च और अन्य स्तरों पर बैठकें होती रहेंगी। दोनों पक्ष इस पर तैयार हैं कि 'भारत-पाकिस्तान संयुक्त समितियां' नियुक्त की जाएं, जो अपनी सरकारों को बताएं कि आगे और क्या कदम उठाए जाएं।

: उद्घोषणा :

भारत के प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति, सोवियत संघ के नेताओं के; सोवियत सरकार के और व्यक्तिगत रूप से सोवियत संघ की मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष के बहुत कृतज्ञ हैं, जिनके रचनात्मक, मित्रतापूर्ण और महान् सहयोग से यह बैठक हो सकी, जिससे दोनों पक्षों के लिए सन्तोषप्रद परिणाम निकले। वे उजबेकिस्तान की सरकार और वहीं के लोगों को भी दिल से धन्यवाद देते हैं जिन्होंने उनका इतना हार्दिक स्वागत और खातिरदारी की। वे सोवियत रूस

की मंत्रि-परिषद् के अध्यक्ष को इस घोषणा के साक्षी होने को आमंत्रित करते हैं।

१०-१-१९६६	लालबहादुर शास्त्री	मोहम्मद अयूब खां
	ह०	ह०
	(भारत के प्रधानमंत्री)	(पाकिस्तान के राष्ट्रपति)

जैसे ही दोनों देशों के (भारत और पाक) नेताओं ने घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर किए। वातावरण तालियों से गूंज उठा। श्री अयूब और श्री कोसीगिन ने ताशकंद समझौते पर शास्त्री जी को मुबारकवाद दी और इसके बाद श्री कोसीगिन ने साक्षी के रूप में इस घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर किये।

स्थायी मित्रता की सनद

तत्पश्चात् श्री कोसीगिन, शास्त्री जी के पास गए। उनके साथ हाथ मिलाया और कहा—"ताशकंद घोषणा रूस, भारत और पाकिस्तान के बीच स्थायी मित्रता पर सीमेन्ट का काम देगी।"

राष्ट्रपति अयूब ने सम्वाददाताओं से हुई भेंट में बताया—"हम भारत के साथ शांति से रहना चाहते हैं, पाकिस्तान में भारत के विरुद्ध अब कोई भाव नहीं है।"

रूस, भारत और पाकिस्तान के इन तीनों राष्ट्राध्यक्षों ने एक-दूसरे से हाथ मिलाए और फोटो खिचवाया।

राष्ट्रपति अयूब को श्री लालबहादुर शास्त्री की ओर से भोज का निमंत्रण दिया गया जो उन्होंने स्वीकार कर लिया। श्री अयूब के लिए भारतीय खाना परोसा गया, जो उन्होंने सहर्ष खाया।

अन्तिम दिन श्री कोसीगिन ने दोनों नेताओं के सम्मान में भोज दिया। जब शास्त्री जी भोज से उठे तो लौटते समय शास्त्री जी ने

अन्तिम बार राष्ट्रपति अयूब से कहा—"बहुत अच्छा हुआ जो यह समझौता हमारे बीच हो गया।"

इसके बाद श्री अयूब ने शास्त्री जी को 'खुदा हाफिज' कहा। शास्त्री जी ने भी उत्तर में—'खुदा हाफिज' कहा और हाथ मिलाए। इसके बाद दोनों नेताओं ने श्री कोसीगिन से हाथ मिलाए और अपने-अपने बंगलों को चल दिए।

ज्योति बुझ गई

शास्त्री जी रात्रि के साढ़े नौ बजे अपने बंगले पर पहुंचे। कुछ देर विश्राम कर उन्होंने दूध पिया और श्री राजगोपालाचार्य जी को पत्र लिखा। इसी दौरान में शास्त्री जी ने अपनी धर्मपत्नी श्रीमती ललिता शास्त्री और परिवार के अन्य सदस्यों से टेलीफोन पर बातचीत की। उन्होंने फोन पर बातचीत के दौरान बताया कि वे कल ताशकंद से दिल्ली पहुंच जाएंगे।

शास्त्री जी ग्यारह बजे सोने के लिए अपने कमरे में चले गए, लेकिन वे सो न सके। उन्हें खांसी उठी और वे बुरी तरह खांसते रहे। उनके निजी डॉक्टर चुग को बुलाया गया। डॉक्टर ने उनका मुआयना किया। इसके तीन मिनट बाद इन पर बेहोशी छा गई। डॉक्टर ने इनको कृत्रिम ऑक्सीजन देने की कोशिश की। अगले आध घंटे के अन्दर छः रूसी डॉक्टर वहां पहुंच गए परन्तु इनकी कोशिशें भी कारगर सिद्ध न हुई। आखिर भारतीय समय के अनुसार १ बज कर ३२ मिनट पर उनका देहान्त हो गया और सदा के लिए उनकी जीवन ज्योति बुझ गई।

मृत्यु के तुरन्त बाद डॉक्टरी रिपोर्ट प्रसारित की गई जिन पर रूसी विशेषज्ञ डॉक्टरों के हस्ताक्षर थे।

डॉक्टरी रिपोर्ट

ताशकंद में अपने निवास के दौरान भारत के प्रधानमंत्री श्री लाल-बहादुर शास्त्री ने अपने स्वास्थ्य के विषय में कभी कोई शिकायत नहीं की—

१० जनवरी की शाम तक वह पूर्णतया स्वस्थ दिखाई देते थे। १० जनवरी, १९६६ को सायंकाल प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने एक स्वागत-समारोह में भाग लिया। इस स्वागत-समारोह का आयोजन प्रधानमंत्री श्री कोसीगिन द्वारा किया गया था। इस अव-सर पर भी श्री शास्त्री पूर्णतः स्वस्थ और प्रसन्न मुद्रा में थे। उनके निजी डॉक्टर श्री आर० एन० चुग जो स्वागत-समारोह में उनके साथ ही थे, ने बताया कि शास्त्री जी जब अपने निवास-स्थान लौटे तो बड़ प्रसन्न-चित्त थे और किसी प्रकार की अस्वस्थता अनुभव नहीं कर रहे थे।

शास्त्री जी ने अपने निवास-स्थान से टेलीफोन पर दिल्ली में अपने घरवालों से बातचीत में कहा कि—"मैं बुधवार को दिल्ली आ रहा हूं।' इसके पश्चात् वह लगभग साढ़े बारह बजे अपने बिस्तर पर गए।

उसी रात, कोई एक बज कर बीस मिनट पर उन्होंने बेचैनी अनु-भव की और वे बिना बोले अपने कमरे में तेजी से इधर-उधर घूमने लगे। कुछ ही क्षणों बाद सर्वश्री सहाय, श्री कपूर तथा श्री शर्मा ने प्रधानमंत्री के डॉक्टर श्री चुग को सूचना दी कि—"शास्त्री जी अस्वस्थता अनुभव कर रहे हैं।"

डॉक्टर चुग जो शास्त्री जी के साथ वाले कमरे में ही ठहरे हुए थे—"वे तुरन्त उनके कमरे में पहुंचे तब श्री शास्त्री जी अपने बिस्तर पर बैठे हुए थे। उन्हें खांसी उठ रही थी और सांस लेने में भी तक-

लीफ हो रही थी। शास्त्री जी अपने दोनों हाथ सीने पर रखे हुए थे और उनका चेहरा पीला पड़ गया था। नाड़ी की गति बहुत तेज थी, मगर कमजोर चल रही थी। धमनीय दवाव का पता न चलाया जा सका। दिल की धड़कन बहुत धीमी पड़ गयी थी।

डॉ० चुग ने श्री सहाय, श्री कपूर और श्री शर्मा की सहायता से प्रधानमंत्री को तकियों के सहारे ऊंचा लिटाया और उन्हें एक घन सेंटीमीटर मेफिवयूनिट सल्फेट (१५ मि० ग्रा०) और एक घन सेंटीमीटर माईकोरेज्म का अन्तःपेशी इंजेक्शन दिया।

इस इंजेक्शन के तीन मिनट बाद प्रधानमंत्री शास्त्री जी वेहोश हो गए और नव्ज भी वन्द हो गई। अब हृदय की धड़कन भी सुनाई नहीं देती और सांस भी रुक गई थी। ११ जनवरी की रात को ठीक एक वजकर वत्तीस मिनट पर शास्त्री जी ने प्राण त्याग दिए।

डॉ० चुग ने पुनः अभीनीकरण की चेष्टा की। अंग्रेजी के शब्द 'एस' के आकार की एक ट्यूब द्वारा कृत्रिम-श्वांस तथा परोक्ष रूप से हृदय की मालिश की विधि अपनाई। सोवियत डॉक्टर श्रीमती ई० जे० येरमेंकों, डॉ० चुग के बुलाने पर वहां पहुंच गई थीं। उन्होंने भी डॉ० चुग की चेष्टाओं में उनका साथ दिया। श्रीमती ई० जे० येरमेंकों ने प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री को मृत पाया। उस वक्त न तो नव्ज चल रही थी और न ही हृदय की धड़कन सुनाई देती थी, सांस रुक चुकी थी और कार्निया प्रतिवर्त भी अनुपस्थित थे।

पुनः अभीनीकरण को एक आक्षोभ-निरोधक चिकित्सक मण्डली की सहायता से जारी रखा गया। प्रोफेसर यू० एन० अरीपोव, वाई वाई० गार्डन, ओ० एन० पावलोवा, ए० आर० रहीम जानोवा, एम० एस० तुर्सुहोजायेवा तथा जेड० आई० उमीदोवा आदि प्रमुख डॉक्टर

व चिकित्सक इस मण्डली में सम्मिलित थे, जो खबर मिलते ही वहां तुरन्त पहुंच गए थे।

परोक्ष रूप से हृदय की मालिश की चेष्टा की गई। केल्शियम क्लोराइड, एडेना लाईन तथा ग्लूकोज के घोलों का मिश्रण वाएं वेंटीकल की 'टो' में १५ मिनट के अन्तर से दो वार पहुंचाया गया। इन्ट्यूवेशन ट्यूव की सहायता से एक आले द्वारा कृत्रिम-श्वसन की विधि भी अपनाई गई, परन्तु ये सभी चेष्टाएं निष्फल रहीं।

प्रधानमंत्री श्री लालवहादुर शास्त्री को एक वार मायोकार्डियल इन्फार्क्शन का हमला हो चुका है और इसे ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि १० और ११ जनवरी, १९६६ की रात को उनकी स्थिति में जो बिगाड़ पैदा हुआ, उसका कारण भी तीव्र मायो-कार्डियल इन्फार्क्शन ही होगा, जिसके परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हो गई।

आर० एन० चुग
(डॉक्टर ऑफ मेडिसिन)

—यू० एन० अरीपोव
(उजवेक जनतंत्र के सार्वजनिक स्वास्थ्य विभाग के उपमंत्री, डॉ० ऑफ मेडिकल साइंसेज़ तथा प्रो०)

—वाई० वाई० गार्डेन
(सम्मानित वैज्ञानिक, डॉ० ऑफ मेडिकल साइंसेज)

—प्रो० ओ० एन० पावलोवा
(सम्मानित वैज्ञानिक, डॉ० ऑफ मेडिकल साइंसेज)

—प्रो० ए० आर० रहीमजानोवा
(डॉ० ऑफ मेडिकल साइंसेज)

—प्रो० एम० एस० तुर्सुहोजायेवा
(डॉ० ऑफ मेडिकल साइंसेज)

—प्रो० जेड० आई० उमीदोवा

(सोवियत संघ की मेडिकल विज्ञान अकादमी की करेस्पोंडिंग सदस्या, सम्मानित वैज्ञानिक, डॉ० ऑफ मेडिकल साइंसेज़)

—प्रो० ई० जे० येरमेंको

तथा

—डॉ० ए० शामिजाएव

(उजबेक जनतंत्र के सार्वजनिक स्वास्थ्य मंत्रालय के केन्द्रीय अस्पताल के प्रधान डॉ०, कंडीडेट ऑफ मेडिकल साइंसेज़)

× × ×

मृत्यु के तुरन्त बाद भारत के राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन् को सूचना दी गई। राष्ट्रपति अवाक् रह गए। वे कुछ क्षण गम्भीर मुद्रा में बैठे रहे। इसके बाद उन्होंने उपराष्ट्रपति डॉ० जाकिर हुसेन तथा श्री गुलजारीलाल नन्दा को राष्ट्रपति भवन आने की सूचना दी। उनके आगमन पर ये तीनों नेता शास्त्री जी की कोठी पर पहुंचे और श्रीमती ललिता शास्त्री जी को उनके निधन का समाचार दिया।

समाचार सुनते ही ललिता जी पर जैसे पहाड़ टूट गया हो। वह विह्वल होकर रो उठीं और कहा—"मेरे लिए संसार में अब कुछ बाकी नहीं रहा।" शास्त्री जी की बूढ़ी माता रामदुलारी देवी जी को अपने बेटे की मृत्यु पर विश्वास नहीं आ रहा था।

इस दुःखद समाचार से सर्वत्र अंधेरा छा गया। सारा भारत ग़म के सागर में डूब गया।

'भारत-रत्न'

११ जनवरी को ७ बजकर ४० मिनट पर भारत के राष्ट्रपति

सर्वपल्ली डॉ० राधाकृष्णन् ने राष्ट्र के नाम अपना सन्देश प्रसारित करते हुए भारत के प्रधानमंत्री स्व० श्री लालबहादुर शास्त्री को 'भारत-रत्न' की उपाधि से अलंकृत करने की घोषणा की।

मरणोपरान्त भारत-रत्न दिये जाने का यह प्रथम उदाहरण था।

राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन् जी का गला भरा हुआ था और उनकी आवाज भारी थी। वे गहन वेदना के साथ अपना सन्देश राष्ट्र के नाम प्रसारित कर रहे थे।

इस ठिठुरती सर्दी और कोहरे में लिपटी राजधानी के नागरिकों ने जब आंखें खोलीं तब वे इस समाचार को सुनकर स्तब्ध रह गए। ताशकंद समझौते की स्याही अभी सूखने भी न पाई थी कि उससे पहले ही भारत की ओर से हस्ताक्षर करनेवाला प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर इस दुनिया से स्वर्ग सिधार गया। भारत और पाकिस्तान में शांति स्थापित हो, इस नये ऐतिहासिक सूत्रपात का सृजन करनेवाला शांति का मसीहा स्वयं इतिहास बन गया।

"बड़े शौक़ से सुन रहा था ज़माना।
तुम्हीं सो गए दास्तां कहते-कहते ॥"

अपशकुन

ललिता जी का जीवन तो शास्त्री जी पर केन्द्रित था। उनके जीवन की एक-एक सांस उनके स्वामी में पिरोयी हुई थी। इसीलिए उठते-बैठते, रात-दिन वे अपने पूज्य पति का ही स्मरण करती रहती थीं। भगवान् के बाद यदि कोई दूसरी श्रद्धा व पूज्य कोई चीज थी तो वे थे उनके पति शास्त्री जी। वे सच्चे अर्थों में 'सती देवी' थीं।

ताशकंद जाने के पश्चात् ही ललिता जी की तबियत घबड़ाने लगी थी। उनका स्वयं कथन है कि—"शास्त्री जी जब ताशकंद गए

तो शनिवार से ही हमारी तबियत बिगड़ने लगी थी। सोमवार को सपना आया इस रूप में कि बहूरानी के पिता नहीं रहे, मां सफेद कपड़ों में बैठी हैं। तबही हमका लगा कि कुछ अनहोनी होय का है। पर हम बहूरानी का धीरज दिया कि—"उनके लिए तो शुभ है तुम फिकर न करौ"—वह दिन चौथ का बरत था। सब जनीं पूजा के लिए जुरी थीं, सो रामनाथ चपरासी की बहू कहिस—"थाल सूना-सूना लग रहा है।" हम कहा—"थाल बड़ा है, चीजें कम, एहसे सूना लग रहा है, काहे न और चीज धर दो। गिलास मा पानी डारा तो ऐसा लगा जैसे पानी मां मट्टी घुली हो। हमार जी तो बहुत घबड़ाया पर हम धीरज धरा। पर रात तक सपने की बात, पूजा की बात, सब सही हो गयी।

ताशकंद में ग़म

जैसे ही शास्त्री जी के निधन का समाचार ताशकंद में प्रसारित हुआ सारा ताशकंद ग़म में डूब गया। अतः शास्त्री जी का पार्थिव शरीर एक तोपगाड़ी में रखकर ताशकंद के बाजारों में से हवाई अड्डे तक ले जाया गया तो लगभग दस लाख नागरिकों ने अश्रुप्लावित नेत्रों से उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की। नगर से हवाई अड्डे तक १७ किलोमीटर रास्ते पर रूसी जनता और सैनिक पंक्तिबद्ध खड़े थे।

एक सप्ताह पूर्व इन्हीं नागरिकों ने शास्त्री जी की अगवानी कर उनका भव्य स्वागत किया था लेकिन आज सारा नगर शोक विह्वल की मौन तस्वीर बना हुआ था।

श्री कोसीगिन और श्री अयूब ने भी उनके जनाजे को कंधा दिया और वे हवाई जहाज की सीढ़ियों तक गए। हवाई अड्डे पर अत्यन्त हृदय-विदारक दृश्य था। श्री अयूब ने अन्तिम बार शास्त्री जी के

पार्थिव शरीर को नमस्कार किया और फूल माला चढ़ाई।

रूस, भारत और पाकिस्तान के झण्डे झुका दिये गए इनकी जगह काली झण्डियां लहरा रही थीं। सर्वत्र कालिमा छा गई थी। रूस और उज्बेकिस्तान की सरकारों और विभिन्न संगठनों की ओर से मृत शरीर पर फूल चढ़ाये गए।

जैसे ही शास्त्री जी का पार्थिव शरीर एक विशेष रूसी जहाज में रखा गया तो मातमी धुन बजाई गई और तोपों की सलामी दी गई। सैनिक अपने हथियारों को उलटा किए सिर झुकाए खड़े रहे।

शव दिल्ली लौटा

भारत के प्रधानमंत्री, शांति दूत श्री लालबहादुर शास्त्री का शव लेकर रूसी विमान 'इल्युशिन-१८' दोपहर ढाई बजे पालम हवाई अड्डे पर नई दिल्ली पहुंचा।

हवाई अड्डे पर समय से पूर्व ही राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन्, उप-राष्ट्रपति डॉ० जाकिरहुसैन, कार्यकारी प्रधानमंत्री श्री गुलजारीलाल नन्दा, कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज, राज्यों के मुख्यमंत्री, राज्यपाल, विदेशी राजदूत, महापौर आदि विद्यमान थे।

लाखों लोगों की भीड़ उमड़ी पड़ी थी। हवाई अड्डे पर तिल रखने को जगह न थी। चारों ओर सिर-ही-सिर नजर आ रहे थे। इतना अपार जन-समूह और सन्नाटा एक आश्चर्यपूर्ण बात थी इस सन्नाटे के बीच शास्त्री जी के परिवार का विशेषकर चीत्कार करता हुआ रुदन-क्रन्दन यदि स्पष्ट सुनाई दे रहा था तो उस सती साध्वी स्त्री श्रीमती ललिता शास्त्री का था। उनके रुदन और माथे की मिटी बिन्दी को देख लोगों की आंखों में बरबस अश्रुधारा बह रही थी। जैसे ही हवाई जहाज ने हवाई पट्टी को छुआ, वैसे ही चीखती-

चिल्लाती ललिता जी उस ओर भागीं। बड़ी कठिनाई से उन्हें संभाला व रोका गया। सुरक्षा के लिए तैनात एक जवान जहाज के रुकते ही अत्यन्त व्याकुलता और शोकातुर स्थिति में बेहोश होकर गिर पड़ा।

जहाज अपने निश्चित स्थान पर रुका, वायुयान का द्वार खोला गया। वायुयान से सर्वप्रथम भारतीय प्रतिनिधि-मण्डल के साथ ताशकंद गए भारतीय सैनिक सलाहकार लेफ्टिनेंट जनरल श्री पी० पी० कुमारमंगलम् निकले। उनके बाद विदेशमंत्री सरदार स्वर्णसिंह, रक्षामंत्री श्री वाई० बी० चह्वाण तथा भारतीय प्रतिनिधि-मण्डल के अन्य वरिष्ठ सदस्य विमान से उतरे। श्री चह्वाण नीचे आते ही शास्त्री जी के बड़े पुत्र श्री हरिकृष्ण के पास आए और उन्हें वे विमान के अन्दर शव के दर्शनार्थ ले गए। पिता के दर्शन कर हरि-कृष्ण शास्त्री बिलख-बिलखकर रो पड़े और श्री चह्वाण से लिपटकर चीख पड़े। श्री चह्वाण ने उन्हें ढाढस बंधाया और वे दोनों विमान से बाहर आए।

अपने पिता के चरण छूकर जब हरिकृष्ण शास्त्री विमान से नीचे आए इसके थोड़ी देर बाद लेफ्टिनेंट जनरल कैण्डेय, वायस एडमिरल ए० के० चैटर्जी, रीयर एडमिरल एस० एम० कोहली और एयर वाइस मार्शल आर० राजाराम विमान में अन्दर गए। कुछ ही क्षणों बाद राष्ट्रीय ध्वज तिरंगे झण्डे में लिपटा शास्त्री जी का शव कंधे पर उठाए वे सभी लोग बाहर आए।

शव को बाहर आते देख, उपस्थित जन-समूह रो पड़ा। उनके नेत्रों से अश्रुधारा फूट पड़ी। तभी इस शोकाकुल स्थिति को भगवान भास्कर भी न देख सके उन्होंने अपने मुख को बादलों में छुपा लिया और वे तभी प्रकट हुए जब शव को तोपगाड़ी पर रखा जा चुका था।

विमान से उतरने के पश्चात् कुछ दूरी पर खड़ी तोपगाड़ी तक वे

ही चारों सेनाधिकारी शव को ले गए और तभी जल, वायु और थल के सेनाध्यक्षों ने अर्थी को कंधा देकर उन्हें अन्तिम सलामी दी।

राजपूताना राइफल्स के बैंड ने मातमी धुन बजाई और शव को धीरे-धीरे उस ओर ले जाया गया जहां एक तोपगाड़ी खड़ी थी। यह वही तोपगाड़ी थी जिसमें स्व० श्री नेहरू जी के पार्थिव शरीर को रखा गया था।

आधे घंटे तक पालम हवाई अड्डे पर दर्दनाक नजारा बना रहा। हरेक व्यक्ति का मुंह उतरा हुआ था। शोकाकुल वातावरण को कभी-कभी 'शास्त्री अमर रहें' नारा उजागर होकर हवा में लीन हो जाता था और फिर सिसकियों की हल्की आवाजें सुनाई देने लगती थीं।

तोपगाड़ी पर शास्त्री जी के शव को रखे जाने के पहले तीनों सेनाओं के १०० जवानों ने जिनका नेतृत्व मेजर हरवंससिंह कर रहे थे, पहले गार्ड ऑफ ऑनर दिया और फिर बाद में बन्दूक झुकाकर दिवंगत नेता के प्रति सम्मान प्रकट किया। उसी समय राजपूत बैंड ने मातमी धुन बजाई। शव पर राष्ट्रपति के अलावा अन्य भारतीय नेताओं और राजदूतों ने पुष्प मालाएं चढ़ाईं। शास्त्री जी का शव उसी तोपगाड़ी में रखा था जिसमें स्व० प्रधानमंत्री नेहरू का शव रखा गया था। इस सारे संस्कार में आधा घंटा लगा और बाद में तोपगाड़ी (शवगाड़ी) उनके निवास-स्थान १० जनपथ की ओर चल पड़ी।

शास्त्री जी के चेहरे पर शान्ति थी और उनके सिर पर अभी तक गांधी टोपी थी। शव गुलाब और गेंदे के फूलों से ढका हुआ था।

राष्ट्रदेव की अर्चना करनेवाला पुजारी आज स्वयं निश्चेष्ट है। सम्पूर्ण राष्ट्र के भार को अपने सुदृढ़ कंधों पर उठानेवाला कर्मयोगी आज दूसरों द्वारा उठाया जा रहा है। आज वह दीपक बिना आत्मा-

रूपी तेल के बुझ गया है।

पालम हवाई अड्डे से जनपथ का मार्ग लगभग १० मील लम्बा है। इस सम्पूर्ण मार्ग के दोनों ओर जनता शांत-चित्त पंक्तिबद्ध खड़ी थी —अपने नेता के अन्तिम दर्शनार्थ। कई लोग तो फूट-फूटकर रो रहे थे। १९ मील लम्बे मार्ग के दोनों तरफ सेना के ८००० जवान थोड़ी-थोड़ी दूर पर खड़े थे। पालम हवाई अड्डे से लेकर जनपथ नं० १० कोठी तक लाखों नर-नारी और बच्चे चार-पांच घंटे पहले से खड़े हुए थे। कहीं-कहीं पंक्ति ५०-५० व्यक्ति गहरी थी। लोग ऊंची जगहों, बंगलों की चहारदीवारी और पेड़ों पर प्रतीक्षा में बैठे हुए थे अनेक स्थानों पर लोगों ने 'लालबहादुर शास्त्री की जय' के नारे लगाए।

शास्त्री जी का निवास-स्थान शोकाकुल लोगों से ठसाठस भरा था और वहां अजीब खामोशी छाई हुई थी। अनेक लोग सिसकियां भर रहे थे। शास्त्री जी के ९७ वर्षीय चाचा श्री रामप्रसाद जी अपने भतीजे के काम करने तथा सोने के कमरे में बार-बार जाते और कुछ ही देर में बाहर लौट आते। वे दुःख भरे शब्दों में यही कह रहे थे— शास्त्री को 'दफनाने' से पहले मुझे 'दफना' दो।

एक मोटी खादी की साड़ी पहने श्रीमती ललितादेवी शास्त्री उस छोटे कमरे में शोक में डूबी हुई थीं जो शास्त्री जी के सोने का कमरा था। पलंग पर पड़ी-पड़ी वह बार-बार चिल्ला उठती थीं—"हाय राम, मुझसे तो वे कहते थे बुधवार को लौट आऊंगा।"

पिछली रात को ही उन्होंने सकटचौथ का व्रत रखा हुआ था और रात को १ बजे स्नान करके पूजा की थी।

शास्त्री जी के निवास-स्थान पर गीता का अखण्ड पाठ किया जा रहा था, जिसमें करीब ३० पंडित भाग ले रहे थे।

चार बजकर दस मिनट पर उनके निवास-स्थान का दरवाजा खुला, उस व्यक्ति को दाखिल करने के लिए जो वहां का रूहेरवां था।

शास्त्री जी का शव जब १० जनपथ पहुंचा तब उनका विशाल परिवार, जो मानस में गहरी वेदना समोए बड़ी उत्कंठा से दर्शनों की प्रतीक्षा कर रहा था, एकबारगी हाहाकार कर उठा। वहां का दृश्य बड़ा ही हृदय-विदारक था। श्रीमती ललिता शास्त्री तो अपने पति का शव देखकर चीत्कार कर उठीं और तत्काल अचेत हो गईं।

कई वर्ष पूर्व जब शास्त्री जी को पहली बार दिल का दौरा पड़ा था तब से अब तक उनके खान-पान और रहन-सहन पर लगातार कड़ी दृष्टि रखती आई थीं और प्रधानमंत्री के रूप में शास्त्री जी जब-जब भी विदेश गए थे, ललिता जी उनके साथ ही गई थीं। यही पहला अवसर था जब शास्त्री जी अकेले ताशकंद गए। सम्भवत: विधाता ने सती की इस भूल से लाभ उठाकर क्रूर काल के हाथ उनके स्वामी को सौंप दिया था। उस देवी को आज भी यह विश्वास है कि यदि उनसे यह भूल न हुई होती तो मृत्यु शास्त्री जी को उनसे अलग नहीं कर सकती थी। वह अपने पति को देखने के लिए पागल-सी हो रही थीं। उन्हें कल्पना भी नहीं थी कि मरने के बाद उनके पति कैसे लगते होंगे। इसलिए जब शास्त्री जी का नीला पड़ा शव उनकी आंखों के सामने आया तो वे उस दृश्य को सहन न कर पाईं और पुन: अचेत हो गईं। वृद्धा मां को जो जीवन भर अपने इस 'नन्हुकु' को कलेजे से लगाए उसके सुख की कामना करती रही थीं उन्हें यकीन ही नहीं हुआ कि उनका पुत्र जीवित नहीं है। वह पत्थर सी जम गईं। मौन, शांत।

जिस समय शास्त्री जी के शव को नीचे उतारा गया तो सभी को

चीरते हुए ललिता जी तेजी से आगे बढ़ीं और अर्थी पर अपना सिर पटक दिया और जोर-जोर से रोने लगीं और वहीं नीचे फर्श पर दोनों हाथों से पति को पकड़कर बैठ गईं। बड़ी मुश्किल से उन्हें उठाया गया।

इसके बाद शव को एक कमरे में ले जाया गया जहां परिवार की अन्य महिलाएं विलाप कर रही थीं।

इसके बाद धार्मिक-संस्कार सम्पन्न हुए शव को गंगाजल से स्नान कराया गया और उनके घर के पुरोहित श्री राजाराम जी (इलाहाबाद वाले) ने धार्मिक-संस्कार कराए। इन आवश्यक धार्मिक-क्रियाओं के बाद लगभग साढ़े आठ बजे रात्रि को शास्त्री जी का शव विशेष रूप से बनाये गए ९ फुट ऊंचे मंच पर मंत्र-ध्वनि के बीच रखा गया जहां पहले से ही प्रतीक्षा कर रही अपार जनता दर्शनार्थ उमड़ पड़ी।

'हाय राम', के दुखद स्वर के अतिरिक्त केवल 'सिसकियों' की आवाज ही वहां के शांत वातावरण में सुनाई देती थी और समीप ही मुख्य द्वार के समीप वेद-पाठी धार्मिक ग्रंथों का पाठ कर रहे थे।

इंडिया गेट की ओर से तथा म्यूजियम की तरफ से दोनों ओर के मार्ग व समीप के पार्क जनता की भीड़ से भरे हुए थे जो दर्शनों की प्रतीक्षा में सारी रात लाइन में खड़े रहे।

शोक विह्वल ललिता जी अपने पति के चरणों में माथा टेके सारी रात बैठी रोती रहीं उनका तेजस्वी चेहरा धूमिल पड़ गया था और उनके माथे की सुहाग-चिह्न 'बिन्दी' मिट गई थी, उनके समीप ही उनके चारों पुत्र, पुत्रियां तथा परिवार के अन्य लोग रात भर शव के समीप बैठे रहे।

पुष्प, धूप और अगरबत्तियों के सुवासित वातावरण में गीता का

तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों का अखण्ड पाठ ३० पंडितों द्वारा होता रहा और इस ठिठुरती शीत में भी सारी रात दर्शनार्थियों का तांता लगा रहा जो शव के दर्शन कर आंसू बहाते हुए पुष्पांजलि अर्पित कर उन्हें नतमस्तक कर चलते जा रहे थे।

प्रातः साढ़े सात बजे १० जनपथ का मुख्य द्वार पुनः बन्द किया गया और शव पर से पुष्प-मालाएं आदि हटाई गईं जो २० मन से भी अधिक थीं।

साढ़े नौ बजे वायुसेना के बैंड ने विदाई धुन बजाई और सैनिक अधिकारियों ने शव अपने आधीन ले लिया। ससम्मान उनका शव तोपगाड़ी पर रखा गया और १० जनपथ से शास्त्री जी की अनन्त-यात्रा आरम्भ हुई। १० जनपथ से वे अन्तिम विदा ले रहे थे— कबीर जी की उस वाणी के अनुसार—'नईहर छूटो ही जाय'।

२० लाख से भी अधिक नर-नारियों ने अपने-अपने इस शान्ति देवता के चरणों में शीष झुकाकर उनकी जय-जयकार की।

अन्तिम दर्शन

भारत के लाखों नर-नारी, आबाल-वृद्ध इस राष्ट्रपुरुष को अंतिम वीर श्रद्धांजलि अर्पण करने आ रहे हैं। मंगलवार सायं पौने पांच बजे से जो पंक्ति लगी, उसका अन्त दृष्टिगोचर नहीं होता। द्रौपदी के चीर की भांति, उसका छोर नहीं विदित होता है। सम्भवतः १० लाख व्यक्ति इस ज्योति-पुंज के दर्शनों से अनुगृहीत हुए होंगे।

देश के कोने-कोने से जनता वायुयान, रेल, बस, कार आदि शीघ्र-गामी वाहनों से १० जनपथ पहुंच रही थी। वहां विदेशी महापुरुषों एवं राजनीतिज्ञों की भी कमी न थी। इस भारतीय-शोक को हल्का करने के लिए उपस्थित थे रूस के प्रधानमंत्री श्री कोसीगिन। अम-

रीका के उपराष्ट्रपति श्री हम्फ्री व विदेशमंत्री श्री डीन रस्क। ब्रिटेन की रानी के प्रतिनिधि लार्ड माउंटबेटन। श्री जार्ज ब्राउन (उपप्रधानमंत्री) व एडवर्ड हीथ (प्रतिपक्षी दल के नेता)। संयुक्त अरब गणराज्य के उपराष्ट्रपति हुसैन-एलशफी। यूगोस्लाविया के उपराष्ट्र-पति जैकोथ ब्लाजविक, पाकिस्तान के वाणिज्यमंत्री श्री गुलाम फारुख। अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री मैंवनवाल व नेपाल की मंत्रि-परिषद् के प्रधान श्री सूर्य बहादुर थापा।

राजनयिकों में चीन के निसृष्टार्थ भी थे। सं० राष्ट्रीय महासचिव ऊथांट के प्रतिनिधि के रूप में श्री सी० वी० नरसिंहम ने भाग लिया।

शव-यात्रा में फ्रांस, जापान, बर्मा, थाईलैंड, सिंगापुर, लाओस, पश्चिमी जर्मनी व कैनिया के विदेश मंत्रियों या विशिष्ट शिष्टमंडलों ने भी भाग लिया। अन्य राष्ट्रों के राजदूत भी अंत्येष्टि-संस्कार के समय मौजूद थे।

महाराजा सिक्किम, भूतान सरकार के अधिकारी व दलाईलामा भी शोकाकुल व्यक्तियों में थे।

तीनों सेनाओं के ४० अफसरों ने सारे समय शास्त्री जी के शव पर पहरा दिया। उनका शव फूल-मालाओं तथा विभिन्न प्रकार के रंगों के पुष्पों से सज्जित था। शव-यात्रा के प्रबन्ध तथा विदेशी नेताओं द्वारा अंतिम दर्शन किए जाने के लिए शास्त्री-निवास के मुख्य द्वार प्रातः (साढ़े सात) बजे बंद कर दिये गए थे।

श्री लालबहादुर शास्त्री के परिवार के सदस्य उनके शव के पांवों के पास शोकाकुल बैठे थे और शोक प्रकट करने वाले रात भर उनके शव की परिक्रमा करते रहे। उनकी आंखों में आंसू थे और चेहरों पर शोक के भाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होते थे। 'रामधुन' तथा गीता

का पाठ हो रहा था। श्रीमती ललिता शास्त्री सारी रात शव के पास बैठी रहीं और बार-बार अपने पति के पांव छूती रहती थीं। उनकी आंखों से अश्रुधारा अविरल रूप से प्रवाहित हो रही थी, कभी-कभी वह इतनी शोकमग्न हो जाती थीं कि अन्य पारिवारिक जन उन्हें संभालते थे।

शवयात्रा आरंभ होने से थोड़ी देर पूर्व राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन्, रूसी प्रधानमंत्री श्री कोसीगिन, लार्ड माउण्टबेटन इत्यादि ने उनके शव पर पुष्पमालाएं चढ़ाईं। कांग्रेस अध्यक्ष श्री के० कामराज, श्रीमती इंदिरा गांधी जी व अन्य मंत्रिगण ने भी आगे बढ़कर शास्त्री जी के शव पर पुष्पमालाएं चढ़ाईं। दलाईलामा ने पुष्पमाला चढ़ाने के बाद श्रीमती ललिता शास्त्री को एक सफेद उत्तरीय भी भेंट किया।

साढ़े नौ बजे प्रातः से थोड़ी देर पहले ही तोपगाड़ी ड्योढ़ी के पास लाई गई जहां शास्त्री जी का शव रखा हुआ था। परिवार के पुरोहित ने धार्मिक रीति से संस्कार कराया तथा परिवार के सदस्यों ने उनके अंतिम दर्शन किए। पास ही शववाहक खड़े हुए थे।

श्रीमती ललिता शास्त्री ने अपने पति के पांवों को अपने सिर से छुआ और उनके चेहरे को विह्वल हृदय से थपकी दी।

अन्तिम प्रयाण

तदुपरांत तीनों सेनाओं से चुने गए ६ शव-वाहकों ने शव को उठाया। ये ६ सैनिक अधिकारी थे—लेफ्टिनेंट जनरल एम. एस. पठानियां, लेफ्टिनेंट जनरल ए० करियप्पा, वाइस एडमिरल चैटर्जी, रीयर एडमिरल एस० एम० कोहली, ग्रुप कैप्टन एच० के० बोस, कैप्टन एस० दास।

शव पर राष्ट्रीय ध्वज लिपटा हुआ था। वे धीरे-धीरे आगे बढ़े और उन्होंने उसे तोपगाड़ी पर रखा। सैनिकों ने अपनी बंदूकों की नालियां नीची कर लीं तथा शोकधुन शुरू हो गई। नौसेना के बैंड ने 'अबाइड वाई मी' की धुन निकाली।

सबसे ज्यादा हृदय-विदारक दृश्य प्रातः उस समय उपस्थित हुआ जबकि शास्त्री जी के शव को तिरंगे झंडे से लपेटा जा रहा था तो श्रीमती ललिता शास्त्री अपने पति के पांवों पर गिर पड़ीं और उनके शव से लिपटकर रोने लगीं। शव तोपगाड़ी पर रखा गया। ललिता शास्त्री भी उस पर चढ़ गईं और उन्होंने शास्त्री जी के माथे को तीन वार स्पर्श किया। उनके वाल विखरे हुए थे। उन्होंने अपनी चूड़ियां निकालीं और शास्त्री जी की छाती पर रख दीं।

जैसे ही तोपगड़ी बाह्य द्वार की ओर बढ़ी, श्रीमती ललिता शास्त्री अपने परिवार के अन्य सदस्यों के साथ-साथ बिलखतीं द्वार तक गईं।

शास्त्री जी के ज्येष्ठ पुत्र हरिकृष्ण तीनों अन्य पुत्र तथा दोनों पुत्रियों सहित गाड़ी पर बैठे।

शवयात्रा

शवयात्रा प्रातः साढ़े नौ बजे आरम्भ हुई।

शवयात्रा में सबसे आगे एक सैनिक दस्ता था जिसका नेतृत्व दिल्ली व राजस्थान एरिया के जनरल ऑफिसर कमांडिग मेजर-जनरल डी० जी० आर० रजवाड़े कर रहे थे। इस सैनिक दस्ते में गार्ड-ब्रिग्रेड की चौथी बटालियन, दो थल, एक जल व दो वायुसेना की ३३-३३ आदमियों की पलाटूनें थीं, राजपूताना राइफल्स व जल-सेना के बैण्ड थे, २४ बिगुलवादक थे।

शव के पीछे प्रमुख अर्थी-वाहक (जनरल जे० एन० चौधरी, वाइस

एडमिरल वी० एस० सोमन, एअर मार्शल अर्जुनसिंह) थे। उसके पश्चात् कार में शास्त्री जी के पुत्र एवं अन्य निकटतम सम्बन्धी थे। उनके पीछे कार्यवाहक प्रधानमंत्री श्री गुलजारीलाल नन्दा, रूस के प्रधानमंत्री श्री कोसीगिन, श्री ह्म्फ्री आदि विदेशी प्रतिनिधियों की कारें थीं।

शव-यात्रा का मार्ग था—जनपथ, राजपथ, इंडियागेट, कर्जन रोड, कनाट सर्कस, रेडियल रोड नं० ७, बाराखम्भा रोड, तिलक मार्ग और इन्द्रप्रस्थ एस्टेट से होते हुए शान्तिवन के समीप।

शवयात्रा के मार्ग पर दोनों ओर सैनिक तथा एन० सी० सी० के केडिट खड़े थे। सैनिक 'आर्डर आर्म' की स्थिति में थे। जैसे ही शव-यात्रा जलूस उनके समीप आने को होता वे दक्ष की स्थिति में आकर 'प्रेसेन्ट आर्म' करते। तत्पश्चात् वे अपनी बन्दूकों को उलटा कर देते थे। भावुक नर-नारी आंखों में आंसू लिए प्रातः से ही अपने नेता को श्रद्धांजलि देने, उनके शव पर फूल चढ़ाने के लिए सड़क के दोनों ओर बैठे थे। लाल गुलाब व पीले गेंदे की मालाएं लिए हुए वृद्ध-बाल-बच्चे सभी अंतिम दर्शन के लिए लालायित थे।

उन्होंने शव पर पुष्पवर्षा की, आंसू बहाए तथा ये नारे लगाये—'लाल बहादुर शास्त्री की जय', 'लाल बहादुर शास्त्री अमर रहें।'

पुरोहित गण शव के आगे-आगे गीता के इस श्लोक का उच्चारण करते चल रहे थे—'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'।

राजपथ के दोनों ओर लोगों की अपार भीड़ थी। शव को देखते ही उनके सिर नीचे झुक गए और वे मौन खड़े रहे। बहुत से लोग पेड़ों पर चढ़े हुए थे तथा उन बैंचों पर खड़े थे जो गणराज्य दिवस के लिए रखी गई थीं।

कनाट सर्कस में शव-वाहक तोपगाड़ी १० बजकर ४० मिनट पर

पहुंची तथा यहां भी लोगों ने नतमस्तक होकर शास्त्री जी को श्रद्धांजलि अर्पित की तथा उनकी पुण्यात्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना की। यहां रूस के प्रधानमंत्री श्री कोसीगिन अपनी कार से उतरकर शवगाड़ी के पीछे सिर झुकाए कुछ समय तक चले। राजपथ व कर्जन रोड पर खड़े सभी लोग शव के पीछे-पीछे चलने लगे, सभी आगे आने की कोशिश में थे। वे अपने प्रिय नेता के, जिनके छोटे से शरीर में बहुत बड़ा दिल था, अंतिम दर्शन करना चाहते थे। कनाट सर्कस में बरामदों, छज्जों व छतों से पुष्प-वर्षा होने लगी।

इसी समय एक हैलीकाप्टर भी आकाश में मंडराने लगा, उससे भी पुष्प वर्षा की गई। पीले गेंदे से सड़कें आच्छादित थीं। ऐसा लगता था मानो शास्त्री जी के शव के स्वागत के लिए स्वर्ण बिछा दिया गया हो। लोगों ने जय-जयकार शुरू कर दिया—'लालबहादुर अमर रहें'।

बाराखम्बा रोड पर रूसी सूचना केन्द्र के सम्मुख खड़े तीन रूसी बच्चों ने हाथ जोड़कर 'नमस्ते' कहते हुए अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

जब शास्त्री जी का शव तिलक ब्रिज से गुजरा तो लोग पुष्प-वर्षा करने लगे। अपने प्रिय नेता के अंतिम दर्शन के लिए वहीं स्टेशन पर यात्रियों ने एक ट्रेन को रोक लिया और लोग उसकी छत पर चढ़कर दर्शन करने लगे।

राजघाट व शांति वन को जाने वाली सड़क रिंग-रोड के दोनों ओर भी लोग खड़े थे। उनकी आंखों में आंसू थे। उन्होंने 'शास्त्री जिन्दाबाद' तथा 'शास्त्री मरकर भी अमर हैं' के नारे लगाए।

जैसे ही शव गांधी जी की समाधि राजघाट के पास से गुजरा वैसे ही लोगों ने 'शास्त्री जी अमर रहें' का नारा लगाया। लेकिन ज्यों-

ज्यों शास्त्री जी का शव 'शांति वन' के निकट पहुंचा लोगों के स्वर भारी हो गए और उनके मुख से यही शब्द निकले—'शांति दूत अमर हो गए।'

शांति वन के सामने अपार जन-समुदाय था, हजारों लोग वहां सुबह से ही जमा थे। वे कम्बल ओढ़े हुए थे हजारों लोग निकटवर्ती देहाती क्षेत्रों से आए हुए थे।

हैलीकाप्टर अभी भी आकाश में चक्कर लगा रहा था। लालकिले के पीछे शांतिवन और विद्युत दाह शव-गृह के मध्य चार एकड़ भूमि अन्त्येष्टि हेतु समतल बनाई गई थी। मध्य में ६ फुट ऊंचा १५ वर्ग-फुट का चबूतरा बनाया गया था; जिस पर शास्त्री जी की अन्त्येष्टि क्रिया होनी थी।

पंचतत्व में लीन

शव के स्वागत के लिए राष्ट्रपति डॉ० राधाकृष्णन् व प्रधानमंत्री श्री गुलजारीलाल नन्दा कुछ मिनट पहले ही वहां पहुंच गये थे और स्वर्गीय प्रधानमंत्री के पुत्रों तथा अन्य रिश्तेदारों के पास जाकर मौन खड़े हो गए थे। थोड़ी देर बाद ही उपराष्ट्रपति डॉ० जाकिर हुसैन, कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज व मंत्रिमंडल के अन्य सदस्य भी वहां पहुंच गए थे।

शववाहक तोपगाड़ी श्मशान भूमि पर १२ बजकर ५ मिनट पर पहुंची और चिता से लगभग ५० गज की दूरी पर रुक गई।

इसके बाद शव को वरिष्ठ सेनाधिकारियों ने गाड़ी से उठाया और उसे चिता तक ले गये। चन्दन की चिता पर शव को रखने के बाद शववाहकों ने नत मस्तक होकर सलामी दी और पीछे हट गए। शोक सलामी देने के लिए तीनों सेनाओं (जल, थल, नभ) के जवानों

तथा [illegible] ने [illegible]।

जब शव दाहस्थल के निकट पहुंचा तो शांति कपोत उड़ाकर श्री शास्त्री के शांति यत्नों का स्मरण किया गया।

शास्त्री जी के कुल पुरोहित पंडित राजाराम और दिल्ली के गोस्वामी गिरधारीलाल ने अंतिम संस्कार कराया। मंत्रोच्चारण में चार अन्य पुरोहितों ने भी सहयोग दिया। शव १२ बजकर १७ मिनट पर चिता पर रखा गया और उनके पुत्र हरिकृष्ण ने १२ बजकर ३२ मिनट पर चिता को प्रज्वलित किया और उसकी परिक्रमा की। चिता सात मन चन्दन से तैयार की गई थी। चिता में ५० किलोग्राम घी तथा ६० किलोग्राम हवन-सामग्री तथा एक टीन गंगाजल छिड़का गया।

विशाल जनसमूह स्तब्ध, शान्त, स्थिर खड़ा अपने नेता की इहलीला का अंतिम संस्कार होते देख रहे थे और देख रहे थे कि कैसे एक गरीब मां का लाल, देश का बहादुर नेता, विद्यापीठ का एक स्नातक शास्त्री और भारत का सिरमौर, शान्ति का अग्रदूत कैसे पंचमहातत्त्वों में लीन होने के लिए लालायित है।

६१ वर्ष तक अपने जीवन की अग्नि-परीक्षा देते हुए कीर्ति के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचकर भी जो शान्त था, गम्भीर था, आज भी शांत है, गम्भीर पड़ा है पर आग में तपकर वह कंचन बन गया है। कर्म की सीपियां आबदार मोती-मणि बन गई हैं।

विरह-वेदना

विना हरि कौन हरे मोरी पीर,
कौन हरे मोरी पीर, जियरा—
कौन धराये धीर।
रोग नष्ट सब दूर करो हरि,
विनती यही रघुवीर॥
जो कुछ है, सब देन तुम्हारी,
रक्षा करो रघुवीर।
बीच भंवर में नैया डगमग,
पार करो रघुबीर॥
घर में ढूंढ़ें वन में ढूंढ़ें—
मिले न कहुं रघुवीर।
किससे कहूं हरि पीर हृदय की,
दर्शन दें रघुबीर॥
रहे न भक्ति अधूरी मोरी,
लागत डर रघुवीर।
ललिता को प्रभु आस तुम्हारी,
सुनि लो हे रघुबीर॥

—श्रीमती ललिता देवी शास्त्री

शोक में डूबी विश्व की श्रद्धांजलि

स्वतन्त्रता के सेनानी, उत्तर प्रदेश मंत्रिमण्डल के मंत्री तथा संघीय मंत्रिमण्डल के मंत्री के रूप में उनकी अनेक उपलब्धियां प्रसिद्ध हैं। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् के वर्षों में लालबहादुर शास्त्री ने कांग्रेस दल के संगठन के लिए कार्य किया। वे एक शांत, आडम्बर रहित तथा पक्के राष्ट्रवादी थे।

अन्न, वित्त तथा हमारी अन्य आन्तरिक समस्याओं के अतिरिक्त कच्छ के रन और जम्मू-काश्मीर में पाकिस्तान के साथ युद्ध ने हमारी जनता को गहरा आघात पहुंचाया। इस आक्रमण का सामना करने के लिए एक सम्मिलित राष्ट्रीय प्रयत्न किया गया और श्री लालबहादुर शास्त्री ने इन सब कार्यों में प्रमुख रूप से भाग लिया। पाकिस्तान से सन्धि करने के लिए वे ताशकंद गये। वहां उनके प्रयास तथा शांति के कारण उनका अवसान हुआ।

हमारी समस्याओं का कोई सैनिक समाधान नहीं हो सकता। हम दोनों देशों को अनुभव करना चाहिए कि यदि हम अपने शत्रु पर शक्ति द्वारा विजय पाना चाहते हैं तो हम घृणा व शत्रुता को बढ़ाते हैं और यदि हम सहानुभूति तथा सद्भावना से उन पर विजय पाते हैं तो हम शांति और मित्रता प्राप्त करते हैं। दमन तथा भय पर आधारित शांति क्षणिक होगी जबकि यदि वह नैतिक शक्ति और सत्य पर आधारित हो तो चिरस्थायी होगी।

दोनों देशों के लिए गत वर्षों की कटुता को भुलाकर शांति और मित्रता के लिए कार्य करने की प्रतिज्ञा करते हुए उनकी मृत्यु हुई। मैं यह विश्वास करता हूं कि बैठकों से दोनों पक्षों के पारस्परिक व्यवहार की दुष्परिवर्तनशीलता व कठोरता कम होने में सहायता मिलेगी।

—डॉ० स० प० राधाकृष्णन्
(भारत के राष्ट्रपति)

केवल १९ माह के कार्यकाल में, प्रधानमंत्री शास्त्री जी भारतीय लोकतंत्र को ऊंचा उठाकर श्री नेहरू के उपयुक्त उत्तराधिकारी सिद्ध हुए।

उच्च पद पर उनकी शालीनता तथा जनता के मान्य नेता के रूप में उनकी शक्ति और विवेक को नहीं छिपा सकी। उनके अभाव में यह संसार तुच्छ स्थान है और उनके परिवार तथा भारतीय जनता के साथ हमारी भावनाएं हैं।

—श्री लिण्डन बी० जॉनसन
(संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति)

वस्तुतः शांतिप्रिय व्यक्ति होने के कारण उन्होंने अपना जीवन शांति के बदले में अर्पित कर दिया। उनके निधन पर जिन्हें केवल सम्मान ही नहीं प्रेम भी मिला, एक कृतज्ञ राष्ट्र दुःख में डूबा हुआ है।

वे जनता के अपने थे तथा उसकी स्मृति में एक उस व्यक्ति के रूप में हैं, जिसने अन्तिम समय तक कठिन परिश्रम करते हुए प्रसन्नता से अपने जीवन का बलिदान कर दिया। राजनीतिज्ञता का

उनका अन्तिम कार्य भविष्य में स्वयं अपना महत्व व्यक्त करेगा, जब उनकी एक शांतिपूर्ण तथा मैत्रीपूर्ण उपमहाद्वीप की कल्पना साकार होगी। विश्व में शांति के निर्माताओं में उनका नाम सदैव अग्रणी रहेगा।

—डॉ० जाकिर हुसैन
(भारत के उपराष्ट्रपति)

सोवियत जनता भली-भांति जानती है कि लालबहादुर शास्त्री ने राष्ट्रीय स्वाधीनता के आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया तथा इसके लिए औपनिवेशिक सत्ताधारियों द्वारा कई बार अभियुक्त वनाये गए। महात्मा गांधी के अनुयायी तथा जवाहरलाल नेहरू के कंधे से कंधा मिलाकर चलनेवाले सहयोगी शास्त्री जी राजनीतिज्ञ तथा एक राज नेता के रूप में सफल हुए।

लालबहादुर शास्त्री को एक भारी उत्तरदायित्व वहन करना पड़ा। उन्हें कठिन परिस्थितियों में राज्य के कार्यों का संचालन करना पड़ा। इस प्रकार की जटिल परिस्थिति में कठिनाइयों पर विजय पाने के मार्ग ढूंढ़ सकने के कारण उन्हें उचित श्रेय दिया जाना चाहिए।

इन वर्षों में लालबहादुर शास्त्री एक यथार्थवादी राजनीतिज्ञ सिद्ध हुए। उनका यह गुण विशेष रूप से ताशकंद बैठक के समय प्रदर्शित हुआ।

हम इस क्षति के दुःख को विशेष रूप से अनुभव करते हैं क्योंकि ताशकंद बैठक के पांच दिनों में हमें प्रतिदिन और प्रत्यक्ष रूप से लाल-बहादुर शास्त्री से मिलने तथा यह देखने का अवसर मिला था कि किस प्रकार यह प्रभावशाली व्यक्ति चतुर राजनीतिज्ञों के उपयुक्त महान् कर्म शक्ति तथा आत्मसंयम प्रदर्शन करते हुए धैर्यपूर्वक भारत

तथा सम्पूर्ण विश्व के लिए महत्वपूर्ण प्रश्न का समाधान खोज रहा था।

—श्री एलेक्सी कोसीगिन

(सोवियत समाजवादी संघ गणराज्य के मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष)

राष्ट्रमण्डल में तथा सर्वत्र ही उनका अभाव अनुभव होता रहेगा। उनकी राजनीतिज्ञता, ईमानदारी, उच्च न्याय-निष्ठा के गुण सम्मान-जनक हैं। हममें से जो उन्हें जानते थे, वे उनके शांत तथा निःस्वार्थ स्वभाव से प्रभावित हुए थे। उनके निधन पर भारत, राष्ट्रमण्डल और विश्व शोकाकुल हैं।

—श्री हेरॉल्ड विल्सन

(ब्रिटिश प्रधानमंत्री)

शास्त्री जी की आकस्मिक मृत्यु ने केवल मुझे ही नहीं समस्त यूगोस्लाव जनता को गहरा आघात पहुंचाया है। उनके निधन से भारतीय जनता तथा प्रगतिशील विश्व ने शांति का एक सच्चा समर्थक तथा यूगोस्लाव जनता ने अपना महान् मित्र खो दिया है।

—मार्शल जोसिप बी० टीटो

(यूगोस्लाविया के राष्ट्रपति)

शास्त्री जी एक उच्च सत्य, निष्ठा तथा साहस से ओतप्रोत व्यक्ति थे जिन्होंने श्री नेहरू की मृत्यु के पश्चात् एक बहुत बड़े कार्य का उत्तरदायित्व ग्रहण किया था।

—लार्ड क्लीमेंट एटली

शास्त्री जी के अप्रत्याशित निधन से यूनान जनता और सरकार शोक निमग्न है। वे शांति के आदर्श पर विशेष रूप से आसक्त थे। साइप्रस पर उनके देश और सरकार के व्यवहार को यूनान नहीं भुला सकता है। शास्त्री जी उदात्त आदर्शों के सच्चे समर्थक रहे और उनका उदाहरण हमें मार्गदर्शन देता रहेगा।

—श्री स्टीफेनॉस स्टीफेनॉपालस
(ग्रीक प्रधानमंत्री)

वे वास्तव में ईमानदार, निष्पक्ष तथा विश्वस्त व्यक्ति थे। वे ऐसे व्यक्ति थे जिन पर प्रत्येक का विश्वास था। उन्होंने कठिन परिस्थितियां में भारत की बागडोर संभाली।

—लार्ड माउन्टबेटन

संसार ने एक महान् शांति निर्माता खो दिया। शास्त्री जी ऐसे व्यक्ति थे जिनमें शांति स्थापित करने का साहस था और हमें आशा करनी चाहिए कि उनकी शान्तिप्रिय परम्पराओं का अनुसरण अन्य लोग भी करेंगे।

—श्री ह्यूबर्ट हम्फ्री
(संयुक्त राज्य के उपराष्ट्रपति)

श्री लालबहादुर शास्त्री की मृदुल वाणी तथा सौम्य आचरण में ऐसे व्यक्ति की सबल इच्छा शक्ति, तीक्ष्ण बुद्धि व तीव्र समर्पण की भावना छिपी थी, जो विश्व की सबसे विशाल प्रजातंत्र का गम्भीरतम संकटों के समय में नेतृत्व करने के सर्वाधिक उपयुक्त था। भारतीय जनता की त्वरित उन्नति के प्रति पूर्ण समर्पण तथा शांति

के लिए अपने अथक प्रयत्नों द्वारा उन्होंने भारतीय जनता तथा स्वयं के लिए अमेरिकन जनता के हृदय में अमिट स्थान बना लिया था।

—श्री चेस्टर बॉवेल्स
(भारत में अमरीकी राजदूत)

स्वर्गीय प्रधानमंत्री ने ताशकंद में शान्ति के लिए संघर्ष की आवश्यकता पर उसी दृढ़ता के साथ जो कि पाकिस्तान से युद्ध के समय प्रदर्शित हुई थी, बल दिया।

—श्री वाय० वी० चह्वाण
(भारत के रक्षामंत्री)

प्रधानमंत्री के रूप में १८ महीनों में उन्होंने अपने भागीरथ प्रयत्न में व्यक्त शक्ति और महत्ता के लिए सम्पूर्ण संसार का सम्मान प्राप्त कर लिया। इससे अधिक वे व्यक्तिगत रूप में अच्छाई के प्रतीक थे। अपने सार्वजनिक जीवन में भी उन्होंने शालीनता, सादगी तथा शिष्टाचार के उन्हीं मानदण्डों का प्रयोग किया जिनसे उनके व्यक्तिगत व्यवहार अनुप्राणित थे।

संसार के लिए यह दुःख की बात है कि उनकी ताशकंद सफलता के अगले ही दिन ताशकंद में, जहां धैर्यवान राजनीतिज्ञ ने एशिया के इतिहास में एक नया अध्याय प्रारम्भ किया था, उनका देहावसान हो गया।

—श्री जॉन फ्रीमैन
(भारत में ब्रिटिश उच्चायुक्त)

शास्त्री जी की सादगी, ईमानदारी व सहिष्णुता ने सबको अति

अधिक प्रभावित करती थी जो उनके सम्पर्क में आते थे।

—श्री गुलाम फ़ारुक
(पाकिस्तान के वाणिज्य मंत्री)

हमारे राष्ट्रीय इतिहास के सबसे कठिन समय में श्री लालबहादुर ने अपना सर्वोत्तम अर्पित किया। बेचारे लालबहादुर ने डेढ़ वर्ष की अवधि में अपने नश्वर शरीर को आवश्यकता से अधिक थका डाला।

—आचार्य विनोवा भावे

इस देश में इस समय सबसे बड़ी और कोई आपत्ति नहीं आ सकती थी। अपने नेतृत्व की संक्षिप्त अवधि में ही शास्त्री जी ने देश को एक भयंकर मनोवैज्ञानिक दलदल में से निकाला तथा इसकी आत्मसम्मान और आत्मविश्वास की भावना पुनः प्रतिष्ठित की। उनका शांत साहस, उनकी प्रज्ञा, उनकी नम्रता ने उनके नेतृत्व को वह विशेषता प्रदान की जो आनेवाली सदियों में दुर्लभ है।

—जयप्रकाश नारायण

श्री लालबहादुर की सादगी तथा नम्रता के पीछे उनमें एक स्पष्ट दृष्टि, एक परिपक्व मस्तिष्क तथा गम्भीर विवेक था।

—सी० राजगोपालाचारी

विगत १८ महीनों में छोटे से व्यक्ति श्री शास्त्री ने हिमालय की ऊंचाई को छू लिया। विहीन होते हुए भी वे दृढ़ थे। वे अनौपचारिक होते हुए भी कूटनीतिज्ञ थे। वे प्रत्येक की बात ध्यानपूर्वक व धैर्य से सुनते थे फिर भी सभी निर्णय उनके स्वयं के होते थे। यह एक

विपत्ति नहीं तो और क्या है कि जब राष्ट्र को प्रतिकूल मौसम में से आगे बढ़ना है तो जहाज का नायक इस प्रकार से खो गया है।

—श्री एन० जी० गोरे
(अध्यक्ष, प्रजा समाजवादी दल)

१८ माह की अल्प अवधि में शास्त्री जी ने अपने शांत, सुदृढ़ तथा निर्णायक आचरण द्वारा अपनी स्थिति जिसमें उन्होंने पाकिस्तान के सशस्त्र आक्रमण और चीन की सैनिक धमकी का सामना किया। एक महान् नेता के रूप में प्रतिष्ठित की। उनकी तथा देश की प्रतिष्ठा में उस प्रशंसनीय तरीके से और वृद्धि हुई जिससे ताशकंद में उन्होंने शांति के लिए संघर्ष करके उसे जीता।

—मिस्टर मुहम्मद इसमाइल साहब
(संसद सदस्य, भारतीय संघ
मुस्लिम लीग के अध्यक्ष)

शास्त्री जी ने अपने देशवासियों की सेवा में एकाग्रता से अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। पिछले १८ महीनों में उन्होंने अपनी महत्ता को प्राप्त कर लिया तथा राष्ट्र के इतिहास में निर्णायक मोड़ पर अपने विवेक, साहस तथा कल्पना शक्ति से उसके भाग्य का मार्गदर्शन किया। उन्होंने राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाया तथा युद्ध में तथा सम्मानजनक शांति की प्राप्ति में हमें सफलता की ओर अग्रसर किया। देश उन्हें कृतज्ञतापूर्वक एक महान् प्रधानमंत्री के रूप में सदैव स्मरण रहेगा।

—अखिल भारतीय कांग्रेस समिति

हाल के भारत-पाक संघर्ष में उन्होंने भारत के सम्मान की रक्षा

की तथा हमारे देश की प्रतिष्ठा को ऊंचा उठाया। ताशकंद में अपने शांति मिशन के तुरन्त बाद उनका निधन होना वास्तव में एक दुःखद घटना थी। इस मोड़ पर उनकी क्षति अपूर्णीय है।

—मिस्टर एम० कामराज
(कांग्रेस अध्यक्ष)

शास्त्री जी के मानवीय गुण तथा न्याय, स्वतंत्रता और शांति के आदर्शों की प्राप्ति के लिए उनके सतत् प्रयत्न जर्मन जनता के द्वारा सदैव स्मरण रखे जाएंगे।

—प्रो० लुडविग एर्हर्ड
(जर्मनी के संघीय गणराज्य के चांसलर)

हाल के महीनों की दुराग्रहपूर्ण स्थिति में, शास्त्री जी से अधिक अन्य कोई भारतीय नेता, भारत-पाक सम्बन्ध में विवेक द्वारा, एक अन्तिम मार्ग नहीं खोज सकता था।

—दि टाइम्स (लन्दन)

विश्व शास्त्री जी के देशवासियों तथा भारतीय उपमहाद्वीप में उनके अनुयायियों से उन उपायों की कार्यान्विति की आशा करता है, जिन्हें उन्होंने अपने जीवन के अन्तिम समय में स्वीकार किया था।

शास्त्री जी की मृत्यु कूटनीतिक विजय अथवा भारत तथा पाकिस्तान को विभाजित करनेवाले प्रश्न के निर्णायक हल प्राप्त कर लेने के आवेश में नहीं अपितु पर्याप्त आशा से परिपूर्ण शालीन सफलता

के उपरान्त हुई।

—दि न्यूयार्क टाइम्स

यह समाचार सुनकर मैं स्तंभित सी रह गई। मुझे बहुत दुःख हुआ कि उनकी मृत्यु ताशकंद में हुई। वे दृढ़ संकल्पवाले व्यक्ति थे। उन्होंने सारा जीवन देश की सेवा में गुजार दिया।

—श्रीमती इन्दिरा गांधी

शास्त्री जी के अकस्मात निधन पर विश्वास नहीं आता। जब यह एहसास होता है कि देश को एक शांतिप्रिय व्यक्ति ने शांति के लिए जीवन दे दिया है, उनका नाम शांति के देवता के रूप में सदा ही चमकता रहेगा। स्व० शास्त्री ने हमें त्याग और जन सेवा का सही मार्ग दिखाया है। भारत का एक महान् व्यक्ति खो गया है।

—गुलजारीलाल नन्दा

कल जो हमें धक्का लगा वह बहुत देर तक महसूस होता रहेगा। यह तो ऐसे ही हुआ कि जैसे बिना बादल के बिजली फट पड़ी हो और चमकती दोपहरी में अंधकार छा गया हो। स्व० प्रधानमंत्री ने हमें युद्ध में बिजयी बनाया परन्तु शांति की खोज में स्वयं बलिदान दे दिया। शास्त्री जी सच्चे भारतीय थे। भारतीय संस्कृति के प्रतीक थे, उन्होंने देश की महानता को उसी के प्रकाश में संसार के सम्मुख रखने का प्रयास किया था।

—अटलबिहारी वाजपेयी

श्री लालबहादुर शास्त्री की मृत्यु से मुझे बड़ा दुःख हुआ है। वे

शांतिप्रिय व्यक्ति थे। उनका हमारे से अलग हो जाना न केवल एक बड़ी राष्ट्रीय क्षति है बल्कि अपने एक निजी मित्र से भी अलग हो गया हूं।

—आचार्य कृपलानी

श्री लालबहादुर शास्त्री ने बड़ी ही ईमानदारी से देश का नेतृत्व किया।

—स० हुकुमसिंह (स्पीकर)

शास्त्री जी के जीवन की कुछ महत्वपूर्ण तिथियां

१९०४, २ अक्तूबर	जन्म मुगलसराय में
१९२१	विद्यापीठ में प्रवेश
१९२६	लोकसेवक मण्डल के आजीवन सदस्य
१९२७	विवाह
१९३०	इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के मंत्री
१९३४	इलाहाबाद जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष
१९३५	प्रदेश कांग्रेस के मंत्री
१९३७	प्रान्तीय विधानसभा के सदस्य
१९५१	कांग्रेस पार्टी की ओर से चुनाव संचालक
१९५२	राज्यसभा के सदस्य
१९५२, मई	परिवहन और रेलवेमंत्री नियुक्त
१९५६	केन्द्रीय सरकार से पदत्याग
१९५७	पुनः कांग्रेस की ओर से चुनाव संचालक
१९५७, अप्रैल	परिवहन और संवहन मंत्री नियुक्त
१९५८, मार्च	उद्योगमंत्री नियुक्त
१९६१, ४ अप्रैल	पंत जी के निधन के बाद स्वराष्ट्र मंत्री नियुक्त
१९६३, मार्च	प्रथम विदेश-यात्रा (नेपाल की)

जनवरी २४, नेहरू जी की अस्वस्थता के कारण बिना विभाग के मंत्री नियुक्त ।

जून २, कांग्रेस संसदीय दल के नेता निर्वाचित ।

जून ९, प्रधानमंत्री पद की शपथ ली ।

अक्तूबर ४, टीटो से वार्ता ।

अक्तूबर ८, तटस्थ सम्मेलन में पांच-सूत्री कार्यक्रम प्रस्तुत ।

अक्तूबर १२, कराची में श्री अयूब से बातचीत ।

दिसम्बर ३, लन्दन में ब्रिटिश प्रधानमंत्री से बातचीत ।

फरवरी १८, अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री से दिल्ली में वार्ता ।

अप्रैल २३, नेपाल की सद्भावना यात्रा पर रवाना ।

मई १२, रूस की आठ दिवसीय यात्रा पर मास्को पहुंचे ।

जून १०, कनाडा की यात्रा पर ओटावा पहुंचे ।

जून १७, राष्ट्रमण्डल सम्मेलन में भाग लेने लन्दन पहुंचे ।

जून २७, श्री नासिर से काहिरा में बातचीत ।

जुलाई १०, ब्रियानी में श्री टीटो से मिले ।

अगस्त ३, श्री मिल्टन ओबोते से बातचीत ।

अगस्त १४, राष्ट्र के नाम सन्देश में कहा कि ताकत का जवाब ताकत से दिया जाएगा ।

सितम्बर १२, ऊथांट से बातचीत ।

सितम्बर १८, चीन के अल्टीमेटम को अस्वीकृत किया ।

सितम्बर २४, रूस के इस आमंत्रण को स्वीकार किया कि उनकी और अयूब की शिखर वार्ता हो ।

अक्तूबर ११, किसानों से उपज बढ़ाने की अपील की ।

अक्तूबर १३, अग्रिम मोर्चों तथा हवाई अड्डों पर गए ।

नवम्बर [illegible], नेपाल के महाराजा से बातचीत।

दिसम्बर १०, लोकसभा में आगामी विदेश-यात्रा के कार्यक्रम की घोषणा।

दिसम्बर २१, रंगून में नेविन से बातचीत।

१९६६

जनवरी ३, श्री अयूब खां से बातचीत के लिए ताशकन्द रवाना।

जनवरी १०, ताशकन्द समझौता।

जनवरी ११, ताशकन्द में निधन।

लालबहादुर शास्त्री जी की आवाज

[भारत के प्रधानमंत्री शास्त्री जी के महत्वपूर्ण भाषणों का सार उनके ही शब्दों में 'राष्ट्र के नाम संदेश']

विश्व-शान्ति

आज मनुष्य जाति के सामने मूल समस्या शांति और निरस्त्रीकरण की है। जाने कितनी पीढ़ियों से मनुष्य जाति, शांति के लिए व्याकुल रही है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के सामने सबसे बड़ा काम यही है कि संसार से युद्ध का नामो-निशान मिट जाए और युद्ध असम्भव हो जाए।

जैसा कि प्रेसिडेण्ट जॉनसन ने कहा है कि—"जवाहरलाल जी का सबसे अच्छा स्मारक यही होगा कि संसार से युद्ध की काली छाया दूर हो जाए।"

संसार के अन्य शांति-प्रेमी राष्ट्रों के साथ मिलकर हम इसी लक्ष्य के लिए काम करने का संकल्प करेंगे। जयहिन्द।

भारत और राष्ट्रसंघ

हमने हमेशा संयुक्त राष्ट्रसंघ का दृढ़ता से समर्थन किया है। इस महान् संस्था के सदस्य के रूप में जो जिम्मेदारियां हमारे ऊपर आई हैं, उन्हें भारत ने अपनी शक्ति भर उठाया है।

मैं फिर से यह घोषित करता हूं कि हमारी सरकार संयुक्त राष्ट्र-संघ का पूरा समर्थन करेगी।

—करतल ध्वनि से सत्कार

उपनिवेशवाद

इस शताब्दी के अधिकांश भाग में गांधी जी और नेहरू जी के नाम सारे संसार की पराधीन जनता के स्वतंत्रता आन्दोलनों के प्रतीक रहे। हमने अपनी स्वतंत्रता बड़े संघर्ष के साथ पाई है और हम सब लोगों से सहानुभूति रखते हैं जो अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे हैं।

संयुक्त राष्ट्रों में और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में हमने सदा पराधीन लोगों का पक्ष लिया है। दुर्भाग्यवश अभी भी संसार में कुछ देश हैं जहां लोग पराधीन हैं और स्वतंत्रता तथा मानव-अधिकारों से वंचित हैं। साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद का अन्त करने के लिए आन्दोलन का समर्थन करना हम अपना नैतिक कर्तव्य समझेंगे, जिससे सारे संसार में लोगों को अपने भाग्य का निर्णय करने का अधिकार मिले।

अफ्रो-एशियाई एकता

हम एशिया-अफ्रीका की एकता को साध्य नहीं, वरन् कुछ ऊंचे आदर्शों की सिद्धि का साधन मानते हैं। हमारा लक्ष्य है कि एशिया और अफ्रीका की जनता स्वतंत्र हो, जिससे सब राष्ट्रों में मेल और शक्ति का क्षेत्र बढ़े और पिछड़े देशों का विकास हो तथा वहां के लोगों की दशा सुधरे।

हम एशिया और अफ्रीका के अपने साथी देशों के साथ मिलकर

विश्व-शान्ति मनावें और सब राष्ट्रों की भलाई के लिए नम्रता-पूर्वक काम करना चाहते हैं।

गरीबी, दारुण समस्या

हमारे सामने जो समस्याएं हैं, उनमें सबसे दारुण समस्या गरीबी की है। हमारे करोड़ों देशवासी गरीबी में जकड़े हुए हैं। मेरी हार्दिक इच्छा है कि मैं किसी प्रकार अपने देशवासियों को गरीबी के बोझ से कुछ हल्का कर सकूं।

खासकर मैं अपने समाज के पिछड़े और दलित लोगों को, अपने अनुसूचित जाति और अनुसूचित आदिम जाति के भाइयों को नहीं भूल सकता। जो सदियों से उपेक्षा और उत्पीड़न के शिकार रहे हैं।

मेरे लिए यह सौभाग्य और गर्व का विषय होगा कि मुझे अपने समाज की व्यवस्था को अधिक न्यायपूर्ण बनाने के लिए काम करने का अवसर मिलेगा।

पर-राष्ट्रनीति

पर-राष्ट्रनीति में हम सभी देशों से, चाहे उनके विचार और राजनीतिक प्रणाली भिन्न हों, मित्रता रखने और सम्बन्ध बढ़ाने का प्रयत्न करते रहेंगे।

हमारी नीति अन्तर्राष्ट्रीय गुटबन्दियों से अलग रहने की रही है और अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में हमारा रुख और दूसरे देशों के साथ हमारा सम्बन्ध इसी बुनियादी नीति पर आधारित होगा।

अपने पड़ोसी देशों में, अपने सम्बन्ध बढ़ाने का हम विशेष प्रयत्न करेंगे। अपने अधिकांश पड़ोसियों से हमारा सम्बन्ध मित्रता और सहयोग का है। कुछ के साथ, कुछ समस्याएं हैं, पर हम शान्ति और

मेल से, न्याय और आत्म-सम्मान के आधार पर उन समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न करेंगे।

—११ जून, १९६४ को राष्ट्र के नाम संदेश

शान्तिपूर्ण सह-अस्वित्व

भारत जैसे देश के लिए जो अपना आर्थिक निर्माण करने में लगा हुआ है शान्ति का विशेष महत्व है। गांधी जी और जवाहर जी के, देश के सामने दूसरा लक्ष्य हो ही क्या सकता है।

अगर सारी मानव जाति की बात सोचें तो शांति का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। हम सच्चाई को आंखों से ओझल नहीं कर सकते कि अब दो देशों के बीच लड़ाई नहीं होगी, अब लड़ाई की आग भड़की तो वह सारे संसार को लपेट लेगी।

—१९ अक्तूबर, १९६४ को प्रसारित भाषण

परमाणु हथियारों पर नियंत्रण

हम सदा से परमाणु हथियारों पर नियंत्रण के पक्ष में रहे हैं। हमारा विचार है कि मानवता को विनाश से बचाने के लिए, विश्व के समस्त राष्ट्रों को मिलकर प्रयत्न करना चाहिए। मेरा ख्याल है कि यूरोप, एशिया, अफ्रीका आदि जिन देशों के पास परमाणु हथियार नहीं हैं, उन्हें मिलकर दुनिया के लोगों को परमाणु हथियारों के खतरे को समझना चाहिए और इसके खिलाफ जनमत तैयार करना चाहिए। इसका असर उन देशों पर भी पड़ेगा जिनके पास परमाणु अस्त्र हैं।

मैं जानता हूं कि हम बड़े कठिन समय से गुजर रहे हैं और हमें

बड़ी समझदारी तथा परस्पर सहयोग से काम करना चाहिए।

—२२ अक्तूबर, १९६४ को दिया गया भाषण
(श्रीमती वन्डारनायके के स्वागत पर)

आत्म-निर्भर बनें

गांधीजी के देश में किसी को त्याग या वलिदान से हिचकना नहीं चाहिए। समय के अनुसार लोगों को अपने खान-पान की आदतों को वदलना चाहिए।

अगर देश में चावल की कमी है तो हमें गेहूं खाना चाहिए। हमें विदेशों के आसरे नहीं रहना चाहिए जहां तक सम्भव हो सके हमें आत्म-निर्भर होना चाहिए, इसी में सवका भला है।

—२१ जनवरी, १९६५ को मुख्यमंत्री सम्मेलन में भाषण

गुट निरपेक्षता

हमने नान-अलाइन्मेंट अथवा गुटों से अलग रहने की नीति अपने स्वार्थ या मतलव निकालने के लिए अख्तियार नहीं की है; हमने इसे इसलिए अपनाया है कि इससे हमें अपनी राय कायम करने की और उस पर चलने की आजादी मिलती है। इससे दुनिया में शान्ति का दायरा वढ़ता है और सव मुल्कों में शान्ति से रहने का वातावरण तैयार होता है।

—२० फरवरी, १९६५ को अफगानिस्तान के प्रधानमंत्री
के सम्मान में दिये गए भोज के अवसर पर भाषण

विश्व-मानव नेहरू

नेहरू जी विश्व नागरिक थे। उन्होंने सदा अन्याय व शोषण के

खिलाफ आवाज उठाई। अन्याय और शोषण चाहे देश में हो या विदेश में, उनको सबसे बड़ा कष्ट होता था। नेहरू जी सदा यह कोशिश करते थे कि विश्व में शान्ति बनी रहे और राष्ट्रों में सद्-भावना बढ़े।

उन्होंने सोवियत संघ से मित्रता करके अमरीकी व सोवियत गुटों में तनाव कम किया। इस मैत्री को भारत और रूस दोनों को मिल-कर दृढ़ बनाना चाहिए।

—१६ मई, १९६५ को ताशकन्द में
नेहरू प्रदर्शनी के उद्घाटन पर भाषण

हम सब भारतीय हैं

हमारा राष्ट्र अपनी सबसे बड़ी समस्या से गुजर रहा है। हमारे सामने सबसे बड़ी समस्या व समय उपस्थित हुआ था; लेकिन उससे एक लाभ भी हुआ। सारी दुनिया ने देख लिया कि भारत के हिन्दू-मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी और अन्य लोग एक राष्ट्र के रूप में किस प्रकार दृढ़ संकल्प से एक उद्देश्य के लिए मिलकर काम करते हैं।

रणक्षेत्र में देश सभी सम्प्रदाय के वीरों ने मातृभूमि के लिए अपने प्राण न्योछावर किये हैं और दिखला दिया है कि वे सबसे पहले भी भारतीय हैं और अन्त में भी भारतीय हैं।

—२२ सितम्बर, १९६५ को
संसद में दिया गया भाषण

देश रहना चाहिए

हम रहें या न रहें। लेकिन यह झण्डा रहना चाहिए और देश

रहना चाहिए।

मुझे विश्वास है कि यह झण्डा रहेगा, हम और आप रहें या न रहें; लेकिन भारत का सिर ऊंचा होगा। भारत दुनिया के देशों में एक बड़ा देश होगा और शायद भारत दुनिया को कुछ दे भी सके।

—१५ अगस्त, १९६५ को लाल किले की प्राचीर से राष्ट्र के नाम संदेश

देश रक्षार्थ दृढ़ संकल्प

हमारे मन में अपने देश के हिफाजत की बात है। लेकिन न्याय के साथ, इन्साफ के साथ, हमें सच्चाई से काम करना, हमें बड़े धीरज और शांति के साथ अभिमान से काम लेना है। हम शान्ति बनाए रखते हुए इस बात का भी मन में पक्का इरादा रखेंगे कि हमारे देश पर कोई संकट आए तो हम सब मिलकर, एक आवाज से बोलें, एक साथ खड़े हों। फिर हम जानेंगे कि हमारे देश का कोई बाल-बांका नहीं हो सकता।

—५ अक्तूबर, १९६५ को विजय दशमी पर दिया गया भाषण

जय जवान, जय किसान

• वक्त बहुत नाजुक है और खतरा अभी टला नहीं है। संकट के समय में बहादुर जवानों ने जो रास्ता दिखाया है क्या हमारे किसान उसमें पीछे रह सकते हैं ? जवान अपना खून बहा रहा है, देश के लिए अपनी जान की बाजी लगाए बैठा है।

किसान को अपनी मेहनत और पसीना देना है। किसान हमारे देश के प्राण हैं। उन्हें आज लाखों की तादाद में उत्साह और मेहनत

से खेती में जुट जाना है। उनके सामने एक ही मंत्र है—"अन्न

पैदावार बढ़ाओ"।

हम दूसरे देशों पर निर्भर न रहें।
रखें। हम पर जो कुछ भी बीते, पर
हमें आत्म निर्भर, शक्तिशाली देश ब

आ

मिलकर चलें

अपने देश में हम शान्ति और सुलह,
और शान्ति चाहते हैं और इसीलि
की बात को मानते हैं कि दुनिया में अ ... अलग-अलग
विचार रखें, लेकिन तब भी वे मिलकर रह सकते हैं।

हरेक मुल्क आजाद है, अपने ढंग पर चलने के लिए। लेकिन उसके मायने यह नहीं कि कोई आपस में लड़े। हम शान्ति से रहें। आजादी से काम करें; लेकिन तब भी मेल रखें। दोस्ती रखें, जिससे कि दुनिया में शान्ति बनी रहे।

—२७ नवम्बर, १९६५ को लाल किले
में आयोजित नेपाल नरेश के अभिनन्दन
समारोह में भाषण

सद्भाव में अडिग विश्वास

भारत का शान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय स्वभाव में अडिग विश्वास है। हम सभी से विशेषत: अपने पड़ोसियों से मित्रता चाहते हैं। अपनी शक्ति को, अपने देश की आर्थिक अवस्था को सुधारने और